उपसंहार :-

'प्रवास ' का अर्थ होता है -परदेस में जाकर रहना ,विदेश जाना, देशान्तर वास। अंग्रेजी भाषा में उन्हें emigration और immigration भी कहते है। पहले के समय में एक राज्य से दूसरे राज्य में जाना परदेस गमन कहलाता था। वे राज्य आज की तरह बहुत बड़े भी नहीं होते थे।आज के किसी प्रदेश से बहुत छोटे भी हो सकते थे।| किन्तु प्रवास शब्द का प्रचलन नहीं था। अधिक से अधिक विदेसिया शब्द ज्यादा प्रचलित था। लोकजीवन में वह नायक जो विदेश जाता था वह विशेषकर क्रूर दिखाया जाता था।

'प्रवासी 'का उद्देश्य विदेश में रहनेवाले अथवा तो अपना मूल स्थान छोड़कर दूसरे स्थान में रहनेवाले व्यक्ति से है। उसका दूसरे देश में जाना अथवा वहाँ जाकर वहीं रह जाना ही प्रवास कहलाता है। इसी अर्थ में वह प्रवासी बन जाता है और उसी वक्त तक प्रवासी बन जाता है जब तक कि वह लौटकर नहीं आ जाता। आप्रवासन उसके बसने के लिए उपयोग में लाई जानेवाली भाव वाचक संज्ञा है। इसे विदेश गमन अथवा विदेश में वास भी कह सकते है। इस दृष्टि परदेस गमन स्थायी भी हो सकता है और अस्थाई भी कभी कभी उसके विदेशी नागरिक बन जाने पर भी उससे नेह-नाता नहीं टूटता और वह प्रवासी ही रहता है। मॉरीशस ,त्रिनिडाड और टुबैगो में कई दिनों से रह गए भारतीय वर्तमान समय में भी हमारे लिए प्रवासी भारतीय है और वे भी खुद को सांस्कृतिक रूप से भारतीय ही मानते हैं।

प्रवासी साहित्य का संबंध प्रवासी लोगों के द्वारा लिखे गए साहित्य से है। प्रवासी कथा साहित्य लेखक की संवेदनाएँ और समय की धड़कन को अपने से समा लेती है। साहित्यकार का संवेदन ही मूलरूप से उसका दिशा निर्देश करता है। हिंदी के प्रवासी साहित्य में दो मुख्य धाराएँ प्राप्त होती है। 1.गिरमिटिया मजदूरों के देश का साहित्य 2.संसार के विकसित देशों में रचा गया हिन्दी साहित्य। प्रवासी कथा साहित्य भारत के पाठकों के लिए एक नयेपन का बोध देता है। प्रवासी कथा साहित्य में लेखकों ने विदेशों का परिवेश, संघर्ष, विशिष्टताओं और रिश्तों का और एक भिन्न समाज का परिचय करवाया है। प्रवासी कथा साहित्य का विषय समाज की ठोस समस्या से जुड़े होते है और नारी चरित्रों से सामाजिक कुरिवाज और अन्याय का अनावरण भी करवाता है।

प्रवासी के लिए यह आसान नहीं होता कि यह अपनाये हुए देश की संस्कृति

से जुड़ सके। उनकी जड़े मातृभूमि और संस्कार से जुड़ी होती है। प्रवास' पर गए व्यक्ति के सुख-दु:ख सामान्य नहीं रह जाते है। भाव में उनके लिए दु:ख और भी दु:खदायी हो जाते हैं। उसका एक मात्र कारण यह है कि विदेशों में जाने वाले भारतीय वहाँ केवल शारीरिक रूप से नहीं जाते अपने भौतिक सामान के साथ वे अपने मन की गठरी में चुपचाप अपनी संस्कृति, जीवन मूल्य और परम्पराएँ बाँध के ले जाते हैं और विदेशी धरती पर बड़े यत्न से इस धरोहर के रक्षण और संवर्धन में जुटे रहते है।

यह प्रवासी साहित्य प्रवासी लोगों द्वारा लिखा गया साहित्य हैं। इनके साहित्य की अंतर्वस्तु तथा उसकी भीतरी विशेषता या सुंदरता अप्रतिम है। परंतु बाहरी सुंदरता यानी शिल्प और उसका सौंदर्यशास्त्र स्वदेशी अर्थात मूलधारा के साहित्य की अपेक्षा कमतर दिख सकता है। प्रवासी विमर्श में इसके वस्तु पक्ष की अपेक्षा अंतर्वस्तु पर जोर देता है। कहे गए कि शैली की अपेक्षा उसके भीतर के मूल्यों की परख करता है। प्रवासी साहित्य पर कमलेश्वर के विचार की रचना अपने मानदंड खुद तय करती है इसलिए उसके मानदंड बनाए नहीं जाएँगे। उन रचनाओं के मानदंड तय होंगे। हमें उसके मूल्यांकन की सही दिशा देते हैं। अपने घर-द्वार छोड़कर गिरमिटिया मजदूरों के रूप में फिजी, मॉरीशस, त्रिनिडाड, गुआना, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में अंग्रेजों द्वारा ले जाए गए अशिक्षित मजदूर हो या स्वेच्छया खाड़ी और यूरोपीय तथा देशों में गए अशिक्षित-अर्द्धशिक्षित, कुशल अथवा अर्द्धकुशल मजदूर या सुशिक्षित मध्यवर्गीय इंजीनियर सबमें अपनी मातृभूमि छूटने का दर्द है। यही दर्द जब-जब शब्दों में फूटा है, साहित्य में स्वर के रूप में मुखरित हो पाया है।

प्रवासी साहित्य पर जब भी चर्चा होती है मॉरीशस का नाम कनिष्ठिका पर आ जाता है। विकीपीडिया की सूचनानुसार मॉरीशस में कहानी की विधा पर काम अधिक हुआ है पर कविता-प्रकाशन के काफी बाद में। सन् १६६८ में ईश्वरचन्द्र गंगाराम का एक सपना' कहानी संग्रह छपा। उसी वर्ष ईश्वरदत्त अलीमन ने नई कहानियाँ' नामक कहानी-संग्रह निकाला । १६६७ से लेकर २०१४ तक ६० कहानी-संग्रह यहाँ प्रकाशित हो चुके हैं।

मॉरीशस के प्रमुख कहानीकार ये हैं:- अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर, पूजानंद नेमा, भानुमति नागदान, धनराज शंभु, जय जीऊत, महेश रामजियावन, डॉ. हेमराज सुन्दर, मोहनलाल बृजमोहन, इन्द्रदेव भोला, यंतुदेव बेधु, आजामिल माताबदल, लोचन बिदेसी,

दानीश्वर शाम, पं. बेणीमाधो रामखेलावन, राज हीरामन आदि। उपन्यास के क्षेत्र में राज हीरामन आदि।

उपन्यास के क्षेत्र में मॉरीशस के लेखकों ने ऐसे मील के पत्थर गाड़े हैं जो दूर से दिखते ही नहीं भारतीय मूल की मुख्यधारा के लेखकों से शिल्प में भी होड़ करते हुए मिलते हैं। उन्होंने अपने पूर्वजों के गिरमिटिया होने के दर्द को पिया ही नहीं शिव की तरह उसे जिया भी है। 'पहला कदम' मॉरीशस का पहला हिन्दी उपन्यास माना जाता है जो १६६० में प्रकाशित हुआ। इसके रचयिता कृष्ण लाल बिहारी हैं। उनके ठीक दस वर्ष बाद मॉरीशस के कथाकार तथा उपन्यास सम्राट अभिमन्यु अनत का पहला उपन्यास प्रकाशित हुआ 'और नदी बहती रही।"१६७० से जीवन के अंतिम क्षणों तक वे रचनारत रहे थे। उनके ५० से भी अधिक उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। 'लाल पसीना' उनका कालजयी उपन्यास है। अभिमन्यु अनत की अगली पीढ़ी में रामदेव धुरंधर आते हैं। इन्होंने सात खण्डों (३ हजार पृष्ठों और ५ सौ पात्रों) वाला 'पथरीला सोना' लिखकर संसार के सबसे प्रदीर्घ उपन्यास लिखने का कीर्तिमान अपने नाम कर लिया है। इसी के साथ इनके दस उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। इनकी क्षणिकाओं और लघु कथाओं को मिला लें तो इनके विपुल रचनासंसार से हिंदी जगत उपकृत है। रामदेव धुरंधर अपनी लेखनी से हिन्दी के प्रवासी साहित्य को इस तरह से समृद्ध कर रहे हैं कि वह दिन दूर नहीं जब प्रवासी का भेद स्वतः समाप्त हो जाएगा।

मॉरीशस की धरा ने बिहारी और फ्रेंच को मिलाकर एक नई भाषा 'क्रियोल' ही नहीं सजित की अपितु विदेश में हिन्दी को भी एक अलग पहचान दी है। इन दो प्रसिद्ध साहित्यकारों के अलावा पंडित बेनीमाधो रामलेखावन ,दानिश्वर शाम ,प्रसाद गणपत ,देव रंजीत ,हीरालाल लीलाधर , आनन्द देबी ,दीपचंद बिहारी ,गोवर्धन ठाकुर इत्यादि ऐसे हस्ताक्षर है जिनका ऋण भी हिंदी साहित्य में किसी भारतीय सर्जक से कुछ कम नहीं आँका जा सकेगा | मॉरीशस के इन सभी सर्जकों ने हिंदी भाषा और उसके साहित्य को सही मायने में वैश्विक प्रतिष्ठा प्राप्त करवाई है।

मॉरीशस के अलावा इंग्लैंड, कनाडा ,अमरीका ,रूस ,और खाड़ी देशों के प्रवासी साहित्यकार भी अपनी-अपनी सीमाओं में हिंदी साहित्य को समृद्ध करने के साथ -साथ अंग्रेजी जैसी तकनीकी रूप से समृद्ध भाषा के समक्ष तैयार कर रहे हैं।

मॉरीशस की धरती पर जन्म लेकर, पलकर ,बढ़कर श्री रामदेव धुरंधर प्रसिद्ध

साहित्यकार बन गए | उन्होंने कहानी तथा व्यंग्य विधा के द्वारा साहित्य में अपने स्थान को मजबूत किया चहु मुखी प्रतिभा के धनी रामदेव धुरंधरजी ने 'पथरीला सोना ' जैसे सात खंडीय विस्तृत और कालजयी उपन्यास जिनके 3000 पृष्ठ तथा 600 के आसपास पात्र है | उन्होंने कई नाटकों तथा एकांकियों की रचना की। यशपाल, प्रेमचंद, फणीश्वरनाथ रेणु ,अमृतलाल नागर ,के.पी.सक्सेना शरद जोशी ,हरिशंकर परसाई ,श्री लाल शुक्ल ,गोपाल चतुर्वेदी जैसे उल्लेखनीय साहित्यकारों से प्रभावित होनेवाले रामदेव धुरंधर जी अपने को मूल रूप से कथाकार मानते हैं |

एक इंसान के तौर पर रामदेव धुरंधर उच्च आदर्श वाले, व्यवहार में अति शालीन, मृदुभाषी तथा परदु:खकातर व्यक्ति हैं। उनके कथा लेखन में विचार-गांभीर्य, रचनात्मक कसावट, ज्ञान-वर्धन एव गहन अनुभव बोध के साथ-साथ उच्चस्तरीय, संवेदनशीलता तथा रंजकता का सुंदर समन्वय हुआ है। इनकी रचनाओं में विषयवस्तु से लेकर अनुभवबोध और कथनभंगिमा तक विभिन्न पहलुओं की मौलिकता साहित्य जगत में सर्वाधिक चर्चा का विषय है। इन्होंने एक साथ ही सामाजिक, आंचलिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक तथा जीवन चरित्रात्मक उपन्यासों की रचना की है। यथार्थ तथा पारिवारिक समस्याओं के किसी ज्वलन्त विषय को उठाते हुए उपन्यास के अंत में उसका समाधान भी देते हैं। नारी संबंधी समस्याओं का निवारण उनके उपन्यासों का ध्येय है। नारी के प्रति उनकी श्रद्धा तथा सहानुभूति उनके उपन्यासों की प्रमुख विशेषता है। लेखक नवीन विचार धारा के कर्णधार हैं। उन्होंने अपने लगभग सभी उपन्यासों में नवीन युग चेतना, नवीन आदर्शों तथा नवीन संस्कृतियों का निर्माण किया है। उन्होंने अपने हिंदी उपन्यासों में प्रवासी भारतीयों की जिन समस्याओं का उल्लेख किया है, वे वास्तविक है, मार्मिक हैं। उनके सभी उपन्यास हिंदी भाषा की धरोहर है। धुरंधर जी आज के समाज से क्षुब्ध एवं अप्रसन्न हैं। अपने समक्ष वह असत्य की सत्य पर विजय होते देखते हैं, सच्चाई की उपेक्षा देखकर उनका हृदय चीत्कार कर उठता है और वह अपना विद्रोह लेखनी से करते हैं। भारतीय संस्कृति और सभ्यता तथा जीवन मूल्यों को आत्मसात व हृदयंगम करने वाले धुरंधर जी बाल्यकाल से ही 'रामचरित मानस' से अत्यधिक प्रभावित हैं। यही कारण हैं कि सत्य पर असत्य की विजय उन्हें किसी भी दशा में स्वीकार नहीं है। उनका सत्याग्रही मन उनकी कृतियों में सदैव विद्रोह करता दिखाई देता है। सारांशत: वे अपने देश-काल के अविस्मरणीय हस्ताक्षर हैं। उनके साहित्य और रचनात्मक अवदान पर विभिन्न दृष्टियों से अध्ययन-अनुसंधान की अपार

संभावनाएँ हैं। ऐसे में हिंदी की युवा लेखिका, शोध अध्येता डॉ. सुमन फुलारा द्वारा रामदेव धुरंधर जी पर किया गया कार्य आत्मीय संतोष प्रदान करता है।

रामदेव धुरंधर अपने लेखन के द्वारा मॉरीशस के इतिहास से भी पाठक को परिचित करवाते चलते हैं | किन्तु एक साहित्यकार होने के नाते लेखक जानते है कि जब इतिहास में कल्पना शक्ति का पुट दिया जाता है तब कलात्मक रचना का जन्म होता है।

उपन्यास जीवन और जगत की जैसी समग्र और व्यापक अभिव्यक्ति उपन्यास संभव है वैसी अन्य किसी विधा में नही। उपन्यास ही एक ऐसी साहित्यिक विधा है जिसमें लेखक कथावस्तु को संतुलित रखते हुए वैचारिक अभिव्यक्ति लिए स्वतन्त्र होता है। यद्यपि अन्य आधुनिक गद्य विधाओं की भाँति ही उपन्यास की कथावस्तु भी कल्पित या वास्तविक पात्रों द्वारा नियन्त्रित होती है, फिर भी इसमें उपन्यासकार को अपने सिद्धान्तों, विचारों और दृष्टिकोणों को व्यापक स्वरूप प्रदान करने व उन्हें प्रकट करने का उचित रंगमंच प्राप्त हो जाता है। उपन्यास न केवल गद्यबद्ध कथानक के माध्यम द्वारा जीवन तथा समाज की व्याख्या का सर्वोत्तम साधन है, अपितु एक लेखक के व्यक्तिगत दृष्टिकोणों, सिद्धान्तों व अंतर्मन की अनुभूतियों की सफल अभिव्यक्ति का परिणाम भी है। यों तो विश्व साहित्य का प्रारम्भ ही सम्भवतः कहानियों से हुआ और वे महाकाव्यों के युग से आज तक के साहित्य का मेरूदण्ड रही है, फिर भी उपन्यास को आधुनिक युग की देन कहना अधिक समुचित होगा। साहित्य में गद्य का प्रयोग जीवन के यथार्थ चित्रण का द्योतक है। साधारण बोलचाल की भाषा द्वारा लेखक के लिए अपने पात्रों, उनकी समस्याओं तथा उनके जीवन की व्यापक पृष्ठभूमि से प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करना आसान हो गया है। जहाँ महाकाव्यों में कृत्रिमता तथा आदर्शोन्मुख प्रवृत्ति की स्पष्ट झलक देखने को मिलती है। आधुनिक उपन्यासकार जीवन की विशृंखलताओं का नग्न चित्रण प्रस्तुत करने में ही अपनी कला की सार्थकता देखता है। यथार्थ के प्रति आग्रह तथा अतिशय कल्पना व अलौकिकता से मोहभंग के परिणामस्वरूप ही महाकाव्यों से भिन्न उपन्यास जैसी विधा अस्तित्व में आयो। अब असीमित कल्पनालोक में विचरण करना कथाकार के लिए सम्भव नहीं रहा। यथार्थ की परिधि ने उसकी सीमाबद्ध कर दिया। महाकाव्यों के लिए आवश्यक इन तत्वों की निरर्थकता के परिणामस्वरूप उपन्यास जैसी विधा के पल्लवन, पुष्पन व प्रस्फुटन के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि निर्मित हुई ।

यूरोपीय पुनर्जागरण के पश्चात उत्पन्न वैज्ञानिक युग के प्रभाव से बदलते व्यक्ति, प्रकृति और समाज के सम्बन्धों तथा आधुनिक युग में गद्य के प्रभावकारी विस्तार के परिणामस्वरूप प्राचीन महाकाव्य जैसी विधाओं से इतर 'उपन्यास' जैसी गद्यात्मक विधा अस्तित्व में आयी सर्वथा नवीन दृष्टिकोणों, नवीन विचारधाराओं, नई समस्याओं, नई जागरूकता, नवीन बौद्धिक क्षमता व तार्किकता के आधार पर उपन्यासकारों ने सामाजिक जीवन की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की। इससे न केवल वैयक्तिकता, स्वानुभूति व सहानुभूति का यथार्थ चित्रण संभव हो सका अपितु सामंतवाद, अभिजात्यवाद व विकृत आदर्शवाद के विपरीत साहित्य में यथार्थोन्मुखता व सामाजिक नैतिकता को बल मिला। यही कारण है कि महाकाव्य जो कल्पना के सहारे आदर्शवादी चित्र प्रस्तुत करता है की अपेक्षा उपन्यास, जो यथार्थ की पृष्ठभूमि पर समाज व व्यक्ति की आलोचनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करता है, वर्तमान में साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा के रूप में अपना स्वतन्त्र स्थान निर्धारित करने में सफल रहा।

यूरोप में उपन्यासों के विकास व विस्तार तथा ब्रिटेन द्वारा भारत में उपनिवेश की स्थापना से उत्पन्न आधुनिकताबोध व पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव स्वरूप भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में साहित्य में विधिवत गद्य की स्थापना के पश्चात ही उपन्यास का जन्म हुआ। इस कालखण्ड के अल्प समयान्तराल में भारत की लगभग सभी भाषाओं उपन्यास सृजन का आरम्भ हुआ और यह बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से लेकर इक्कीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक विभिन्न आरोहो-अवरोहों से गुजरता हुआ उत्कर्ष के अपने इस वर्तमान स्वरूप को प्राप्त कर सका है। हिन्दी उपन्यासों पर भी यही स्थिति समान रूप से लागू होती है।

सतत साहित्य सृजन व अध्ययन के बावजूद भारत की अपेक्षा द्वीपीय देश मॉरिशस में हिन्दी उपन्यास बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में मॉरिशस की चात ही साहित्यिक विधा के रूप में अस्तित्व में आ मॉरीशस के हिन्दी साहित्य के लिए 'उपन्यास' विधाकविता और एकांकी की तुलना में अपेक्षाकृत नयी है, फिर भी ये मॉरीशस के हो है जिसने मॉरीशस के हिन्दी साहित्य को बुलन्दियों पर पहुँचाकर विश्व में उल्लेखनीय स्थान सुरक्षित किया। सृजन उपन्यास को माध्यम बनाकर के द्वारा मॉरिशस के हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में प्रसिद्ध कथाकार अभिमन्यु अनंत व यशस्वी व्यंग्यकार व उपन्यासकार रामदेव धुरंधर जी ने सर्वाधिक योगदान दिया। इन दोनों ने अपनी सृजन अभिक्षमता के द्वारा मॉरीशस के उपन्यासों की वृद्धि, विकास व

विस्तार में अपना बेशकीमती योगदान दिया तथा इनकी औपन्यासिक कृतियाँ मॉरीशसीय हिन्दी साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं। यद्यपि अनेक उपन्यासकारों ने अपनी रचनात्मक प्रतिभा के द्वारा मॉरिशस के उपन्यासों की श्रीवृद्धि में अपना बहुमूल्य योगदान दिया, लेकिन उत्कृष्ट रचनात्मकता, , कथानक की नवीनता तथा सर्वव्यापकता, मौलिकता, मनोवैज्ञानिकता, यथार्थता, श्रेष्ठ पात्र योजना, देशकाल और वातावरण की उचित अन्विति, विषयानुकूल तथा आवश्यक कथोपकथन, उत्कृष्ट भाषा प्रवाह तथा नवीन शैली आदि की दृष्टि से अभिमन्यु अनंत तथा रामदेव धुरंधर का विशिष्ट स्थान है, तथा ये दोनों हैं मॉरिशसीय हिन्दी साहित्य को एक वरदान स्वरूप हैं। एक ओर जहाँ अभिमन अनंत ने कथानक की विविधता, कथावस्तु की सूत्रबद्धता तथा प्रभावात्मकता परिपूर्ण सर्वाधिक मात्रा में उपन्यासों की रचना की तो, वहीं दूसरी तरफ अभिम अनंत के प्रति निष्ठावान तथा उनको अपना अग्रज मानने वाले रामदेव धुरंधर ने 'पथरीला सोना' जैसे महाकाव्यात्मक उपन्यास की रचना करके एक स उपन्यासकार के रूप में अपनी कीर्ति पताका फहरा दी |

मूल रूप से व्यंग्यकार तथा कथाकार रामदेव धुरंधर जी ने यद्यपि अनंत जी की तुलना में कम ही उपन्यासों की रचना की, लेकिन एक उपन्यासकार के रूप में उनकी कीर्ति के आधार स्तम्भ को मजबूती प्रदान करने के लिए इनके यही चंद उपन्यास ही पर्याप्त हैं। इनके उपन्यासों में मॉरिशस के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक सभी प्रकार की विसंगतियों का जीवंत चित्रण हुआ है। धुरंधर जी के उपन्यास केवल कथानक की विविधता और व्यापकता के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं हैं, बल्कि भाषा की सरलता, प्रवाहमयता, विचारशीलता और सार्थकता, शैली की नवीनता तथा प्रभावोत्पादकता चष् पात्र योजना, समय, स्थान और परिवेश की अनिति की आवश्यकता आदि को दृष्टि से भी इनके उपन्यासों की प्रासंगिक रहेगी। धुरंधर जी ने न केवल सामाजिक और राजनीतिकसकी रचना की बल्कि उन्होंने मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों की रचना करके अपनी विचारशीलता का परिचय दिया। 'चेहरों का आदमी' 'छोटी बड़ी 'मछली', 'पूछो इस माटी से', 'बनते बिगड़ते रिश्ते', 'विराट गली के वासिंद' और 'पथरीला सोना' (छः भागों में प्रकाशित बृहत उपन्यास) नामक उपन्यास उनकी इसी रचनाधर्मिता और विचारशीलता का परिणाम है। कल्पित पात्रों के माध्यम से धुरंधर जी ने मॉरिशस में व्याप्त सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक विसंगतियों जैसे मजदूरों का शोषण, गोरों का अत्याचार, आर्थिक अभाव, भाषा एवं

संस्कृति प्रेम तथा समस्याएँ, फ्रेंच और अंग्रेजी का प्रभुत्व, राजनीतिक भ्रष्टाचार, प्रवासी समस्याएँ, गिरमिटिया मजदूरों की समस्याएँ व उनका उत्पीड़न, जाति-पाति भेदभाव, मजदूरों व जमीदारों के बीच संघर्ष, भारतीयों का अपमान, रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास, यौन स्वच्छन्दता, अन्तर्जातीय व अन्तर्धर्मीय विवाह, पारिवारिक टूटन व कलह आदि की हृदय हुई है। इस तरह से अपने उपन्यासों में धुरंधर जी एक तरफ तो यथार्थोन्मुख आदर्शवादी दृष्टि अपनाकर कहीं न कहीं वे प्रेमचन्द व हमवतन अनंत जी की परम्परा में शामिल हो जाते हैं, तो वहीं दूसरी तरफ मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों में मनोविज्ञान के आधार पर पात्रों के अन्तर्मन की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के साथ ही जैनेन्द्र, अज्ञेय और इलाचंद जोशी की परम्परा का भी निर्वहन करते नजर आते हैं। इनकी इसी वैचारिक विविधता तथा उत्कृष्ट विचारशीलता के परिणामस्वरूप ही मॉरिशस का हिन्दी साहित्य उनके इस औपन्यासिक अवदान की उपेक्षा नहीं कर सकता तथा मॉरिशस के हिन्दी साहित्य में उनकी प्रासंगिकता सर्वकालीक बनी रहेगी।

'चेहरों का आदमी' हिन्दी के शीर्ष प्रवासी साहित्यकार 'रामेदव धुरंधर' जी का प्रारम्भिक उपन्यास है जिसका प्रकाशन सन् 1981 में हुआ। यह उपन्यास मूलत: मॉरीशस में वर्ग विशेष की प्रभुत्वशाली राजनीति पर केन्द्रित है, लेकिन इसकी विषय-वस्तु में छिटपुट एवं अप्रत्यक्ष रूप से मॉरीशस की वैविध्य विसंगतियों एवं समस्याओं का समाहार भी दिखाई पड़ता है। उपन्यास का मुख्य पात्र राजशेखर एक व्यवसायी कलाकार है।

'छोटी मछली बड़ी मछली' 'ई.1983 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास मनोविश्लेषणात्मक सामाजिक है , जिसमें मॉरीशस के समाज और उसके आधुनिक अन्तर्विरोधों को एक स्त्री की राजनीतिक अपेक्षाओं के संदर्भ में चित्रित किया गया है | प्रस्तुत उपन्यास में मॉरीशस पर पाश्चात्य प्रभाव, विदेशी शिक्षा का मोह, फ्रेंच और अंग्रेजी का वर्चस्व, राजनीति का खोखलापन, दोहरे मापदण्ड, चुनावी भ्रष्टाचार, जातिवाद, यौन वर्जनाओं का अतिक्रमण शराबखोरी, पुलिस-न्यायपालिका-अस्पतालों की दुरावस्था के साथ-साथ दूसरे वर्ग जो भारतीय परम्परा, स्वधर्म एवं भाषा से प्रेम रखते हुए कर्तव्य निर्वाह करता है की मार्मिक अभिव्यक्ति की गयी है। राजनीति किसी राष्ट्र या व्यक्ति का उतना नहीं जितना अपने समय का दर्शन है। इस सत्य को हम उपन्यास की कथा नायिका विनोदा के चरित्र पर घटित होता देखते हैं। विनोदा इंग्लैण्ड

से वकालत पढ़कर क्या आयी है पूर्णतया पाश्चात्य भौतिकतावादी रंग में रंग गयी है। उसमें महत्वाकांक्षा, स्वार्थ, यौन-स्वेच्छाचार, अहंकार एवं गोरों की भाँति अपने ही देश के लोगों से घृणा का भाव पैदा हो जाता है। वकालत के व्यवसाय में एक बार झूठ को सच साबित कर नाम प्रसिद्ध किया ,दूसरी बार जान-बूझकर अपने स्वार्थ के लिए सच को हार जाने दिया।

'पूछो इस माटी से ' इस उपन्यास में गिरमिटिया मजदूरों की दुःखद मानसिक दशा का वर्णन किया है। प्रत्येक सप्ताह ये सभी गिरमिटिया मजदूर दिनभर की मेहनत के पश्चात थके -हारे खेतों से लौटने पर नहा -धोकर रामचरित का पाठ करते थे | ये वह हिंदी थी,जो सूर ,तुलसी ,मीरा और कबीर की भाषा थी ।हिंदी भाषा तो उनकी भारतीय अस्मिता की पहचान बन गई ,इसी कारण से गिरमिटिया और उनके वंशज हिंदी का योग्य रूप से सम्मान करते रहे।

'बनते बिगड़ते रिश्ते ' उपन्यास ई.1990 में प्रकाशित हुआ है। इसमें मॉरीशस के ग्रामीण जीवन में फैली हुई गरीबी तथा अभावग्रस्तता ,संघर्ष ,आशा-निराशा की पगडण्डी ,प्यार ,आत्मीयता ,ईर्ष्या ,द्वेष ,निम्नवर्गीय पारिवारिक किच किच ,फूहड़पन , मानव जीवन के अलग अलग अलग अलग -अलग उतार -चढ़ाव तथा समय के परिवर्तन को अच्छी तरह से अंकित किया गया है। इस उपन्यास में वर्तमान मॉरीशस के प्रवासी भारतीयों के रिश्तों के परिवर्तित होते स्वरूप का बड़ा ही दिलचस्प तथा यथार्थ लेखा-जोखा का सुन्दर चित्रण किया गया है |

'सहमे हुए सच' द्वीपीय देश मॉरिशस में जन्म लेकर हिन्दी लेखन में प्रवृत्त और उसके प्रति समर्पित धुरंधर जी का यह पहला उपन्यास है जिसका प्रकाशन सन् 1980 में हुआ। मॉरिशस में लिखे गये अन्य सामाजिक उपन्यासों की भाँति 'सहमे हुए सच' भी मॉरिशस पर उपनिवेशवाद के पश्चात् पाश्चात्यीकरण के परिणामस्वरूप मॉरिशसीय जन -जीवन में आयी आधुनिकता व उससे उत्पन्न सामाजिक व पारिवारिक संबंधों की खाई पर केन्द्रित है। एक उपन्यासकार के रूप में प्रतिष्ठित होने के लिए यदि इस उपन्यास को उनकी प्राथमिक पाठशाला माना जाए, तो अतिशयोक्ति नहीं होगी, जिसमें न केवल उन्होंने अपनी प्रयोगधर्मिता का परिचय दिया, बल्कि इसी उपन्यास से उन्होंने कथ्य और शिल्प की समझ भी विकसित की। एक प्रकार से यह उपन्यास कथ्य की दृष्टि से एक जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न तीक्ष्ण बुद्धि वाले बालक की कहानी है, तो शिल्प की दृष्टि

से एक अयोग्य लेखक द्वारा लिखित व्याकरण की पुस्तक भी है। धुरंधर जी द्वारा इस उपन्यास के लेखन के पीछे एक रोचक कहानी भी है।

'विराट गली के बासिंदे 'रामदेव धुरंधरजी का एक व्यंग्यात्मक उपन्यास है।

'पथरीला सोना' रामदेव धुरंधरजी का विस्तृत महत्वपूर्ण उपन्यास है। उनका यह उपन्यास जो सात खण्डों में विभाजित है। इसमें प्रथम भारतीय आप्रवासी मजदूरों के मॉरीशस में आने और समस्याओं से जूझते हुए मज़दूरों की कथा है। जो एक बार मॉरिशस आया, वहीं बस गया तो उनके जीवन से प्रारंभ हुई विडम्बना आज तक उनकी संताने भी उन समस्याओं का सामना कर रही हैं। रामदेव धुरंधर जी ने ई. 1834 से लेकर 2014 तक के मॉरीशस में रह रहे भारतीय मजदूरों की संघर्षगाथा को पूरी तरह अपने उपन्यास 'पथरीला सोना' में समाहित करने का प्रयास किया है।

उपन्यास के प्रारम्भ में उपन्यासकार ने मैथिलीशरण गुप्त की दो पंक्तियाँ रेखांकित की हैं जिसमें व्यक्ति अपनी पहचान की तलाश करता है। अपने अतीत और वर्तमान को देखता है और भविष्य की कल्पना करता है, या वर्तमान की समस्या को भविष्य में कैसे दूर किया जा सकता है उस पर विचार करता है। इसके साथ ही उन तमाम समस्याओं पर विचार करना चाहता है जिसका अभी तक वह भुक्तभोगी रहा है। उन कष्टदायी समस्याओं से निजात पाना चाहता है। आ प्रवासी मजदूरों के संदर्भ ये पंक्तियाँ सटीक बैठती हैं। गुप्त जी की पंक्ति को देखिए- "हम कौन थे क्या हो गए है और क्या होंगे अभी , आओ विचारे आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।" इस उपन्यास की विशालता को देखकर खुद लेखक श्री रामदेव धुरंधरजी ने इसे 'महाकाव्यात्मक गाथा' कहा है।

इस शोध -प्रबंध को मैंने छः अध्यायों में विभक्त किया है। प्रथम अध्याय में प्रवासी हिंदी साहित्य पर प्रकाश डाला है | जिसमें प्रवासी साहित्य का अर्थ ,परिभाषा, अवधारणा , क्षेत्र आदि की विस्तृत विवेचना की है | दूसरे अध्याय रामदेव धुरंधर जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की चर्चा की है। उनके द्वारा लिखित साहित्य पर प्रकाश डाला गया है

तीसरे अध्याय में रामदेव धुरंधर के उपन्यासों भारतीय संस्कृति एवं परिवेश बोध का गहन विश्लेषण किया गया है | हिंदी हमेंशा सौहार्द की भाषा रही है यह भारतीय

संस्कृति की संवाहक बनकर विश्व के हरेक कोने में लोगों के पास जाकर गई है | चौथे अध्याय में रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में भारतीय संस्कृति एवं परिवेशबोध के अन्तर्गत मॉरीशस में बसे इन हिन्दू भोजपुरी समाज ने गाँवो में बहुवर्गीय समाज की स्थापना की | कई प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अपनी मातृभाषा भोजपुरी को जीवित रखा | मॉरीशस में बसे प्रवासी भारतीय भोजपुरी लोग इस सत्य को जानते थे कि भाषा ही संस्कृति की रक्षक है | लेखक ने अपने उपन्यासों के द्वारा उसे चित्रित कर संस्कृति को बचाया है |

पाँचवे अध्याय में रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में समस्याओं का गहन विश्लेषण किया है | जैसे कि गिरमिटिया मजदूरों की समस्याएँ , स्त्रियों की, बच्चों की, वृद्धावस्था की ,बेरोजगारों की तथा राजनीति की समस्याएँ इत्यादि का विस्तृत अध्ययन किया गया है। छठे अध्याय के अन्तर्गत रामदेव धुरंधर के कलापक्ष एवं भावपक्ष का सुन्दर ढंग से विश्लेषण किया गया है। शोध-प्रबंध के अंत में संदर्भ-ग्रन्थ सूची ,लेख तथा पत्र-पत्रिकाओं के नाम दिए गए हैं |

संदर्भ-ग्रन्थ

1. शिवराम आकटे -संस्कृत हिंदी कोश-

2. लोकभारती प्रामाणिक हिंदी कोश .रामचन्द्र वर्मा

3. विदेशी शब्द-सागर -श्याम सुन्दर दास

4. पथरीला -सोना .रामदेवधुरंधर

5. चेहरों का आदमी ' .रामदेव धुरंधर

6. छोटी मछली बड़ी मछली .रामदेव धुरंधर

7. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर

8. बनते बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर

9. पथरीला सोना .एक से सात खंड .रामदेव धुरंधर

10. विश्व हिंदी रचना -कमलकिशोर गोयनका

11. विश्व हिंदी भाषा .केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा

12. प्रवासी भारतीयों की हिंदी सेवा .डॉ. कैलाश कुमारी सहाय

13. संस्कृति के चार अध्याय .रामधारी सिंह दिनकर

14. हिंदी का प्रवासी साहित्य .डॉ. कमल किशोर गायनका

15. मॉरीशस में हिंदी की स्थिति -डॉ. उदय नारायण गंगू

16. विदेशों में हिंदी पत्रकारिता .डॉ. पवन कुमार जैन

17. प्रवासी संसार .सं. श्री राकेश पाण्डेय

18. हिंदी और प्रवासी भारतीय. राकेश बी.दुबे

19. पंचशील शोध समीक्षा .सं. डॉ. हेतु भारद्वाज

20. भारतीय और प्रवासी हिंदी कथा साहित्य : वर्तमान परिदृश्य .सं. मनप्रीत कौर

21. माँ .डॉ. देवमाला रामनाथन

22. विश्व हिंदी रचना .भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद .2003

23. हिंदी प्रवासी कथा साहित्य -प्रो.कल्पना गवली

24. रामदेव धुरंधर साहित्य और रचना धर्मिता .डॉ. सुमन फुलारा

25. मध्य कालीन हिंदी काव्य में भारतीय संस्कृति .मदनगोपाल गुप्त

26. भारतीय संस्कृति और कला .वाचस्पति गैरोला

27. प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता .डॉ. सत्यप्रकाश शर्मा

पत्र-पत्रिकाएँ :-

1. वतन से दूर अभिव्यक्ति ,2008

2. स्मारिका .सं .कमल किशोर गोयनका

3. विश्वा -त्रैमासिक .अमरिका

4. गगनांचल .विश्व हिंदी अंक

5. वसन्त-त्रैमासिक .मॉरीशस

6. वर्तमान साहित्य .प्रवासी साहित्य विषेषांक

7. चाँद .प्रवासी विषेषांक .कलकत्ता

8. विशाल भारत .प्रवासी अंक

9. पुष्पगन्धा त्रैमासिक पत्रिका .विषेषांक .डॉ. कमल किशोर गोयनका

10. कल्पान्त पत्रिका . डॉ. कमल किशोर गोयनका

वेब पत्रिका

1. अभिव्यक्ति

2. प्रवासी दुनिया

3. वीकीपीडिया

4. साहित्य-शिल्पी

5. आलोचना

6. कथादेश

7. वर्तमान साहित्य

रामदेव धुरंधर जी का साक्षात्कार:-

प्रश्न 1. आपने मॉरिशस में जन्म ले कर हिन्दी में जितना लेखन किया है हम भारतीय उससे अपने को बहुत प्रभावित पाते हैं। अपने विशाल लेखन से आपने विशाल सम्मान भी पाया है जो आपका साहित्यिक अधिकार है। मैं इसी प्रश्न को पहले स्थान पर रखता हूँ। कृपया अपने सम्मान के बारे में बतायें।

प्रश्न 1 का उत्तर

आपके प्रथम प्रश्न का मैं स्वागत करता हूँ। अब तक मुझे पचास से अधिक सम्मान मिल चुके हैं। दस बारह बार मुझे हवाई टिकट दे कर सम्मान के लिए भारत बुलाया गया है। जब मुझे श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफको साहित्य सम्मान के लिए दिल्ली बुलाया गया था तो मेरी पत्नी को भी साथ में आने के लिए हवाई टिकट दिया गया था। मैं सूरीनाम गया था तो इसके लिए भी मुझे हवाई टिकट मिला था। रायबरेली उत्तर प्रदेश देवरिया, पटना, बनारस, असम, केरल, गोआ, गुजरात, दिल्ली, अंतरराष्ट्रीय महात्मा गांधी विश्व विद्यालय वर्धा आदि को मैं भूल नहीं सकता। जिस तरह सद्भाव से मुझे बुला कर सम्मानित किया जाता रहा है वह मेरे लिए अनुपम और वन्दनीय है।

मैं यहाँ अपने सम्मानों की एक लिस्ट संलग्न कर रहा हूँ।

विशेष सम्मान

-- हिन्दी विदेश प्रसार सम्मान –[एक लाख रुपये संलग्न] उ. प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ -- 2016

-- श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफको साहित्य सम्मान 2017 [ग्यारह लाख रुपये संलग्न]

-- विक्रमशिला विद्यापीठ भागलपुर --- विद्या वाचस्पति की मानद उपाधि [डॉक्टर] उपाधि 2017

सम्मान

सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन सूरीनाम -- 2003

सृजन श्री सम्मान -- अंतरराष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलन -- 2012

विश्व हिन्दी रत्न -- आधारशिला नैनिताल -- 2012

विश्व भाषा हिन्दी सम्मान -- विश्व हिन्दी सचिवालय -- 2013

अंतरराष्ट्रीय वागेश्वरी सम्मान -- मोरिशस दिल्ली [समंवित 2013]

श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी सम्मान -- नैनिताल आधारशिला -- 2013

विश्व भारती सम्मान -- आधारशिला प्रकाशन भारत -- 2014

प्रेमचंद सम्मान -- हिन्दी भवन न्यास -- नैनिताल भारत -- 2015

साहित्य शिरोमणि सम्मान -- मॉरिशस भारत अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी -- 2015

मॉरिशस हिन्दी रत्न सम्मान -- 2016

विश्व नागरी रत्न सम्मान -- देवरिया भारत -- 2017

विश्व हिन्दी शिरोमणि सम्मान -- 2017

भारतेन्दु हरिश्चंद सम्मान – 2017

वैश्विक हिन्दी साहित्य सम्मान – मुम्बई 2018

परिकल्पना श्री कथा सम्मान – 2018

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी युग प्रेरक सम्मान रायबरेली -- 2019

प्रश्न यह है मुझे अपनी किन रचनाओं के लिए सम्मान प्राप्त हुआ। मेरा उत्तर है मेरे समग्र लेखन को ध्यान में रख कर मुझे सम्मानित किया जाता रहा है। जहाँ भी मैं सम्मानित हुआ मॉरिशस के हिन्दी लेखक के रूप में मेरा परिचय दिया गया और मेरी रचनाओं का जिक्र भी किया गया। मैं ऐसा सुनता हूँ हिन्दी की रचनाएँ पढ़ी नहीं जातीं। पर मैंने सम्मान प्राप्त करते वक्त अपने बारे में आश्चर्य की अनुभूति की है। 1980 में प्रकाशित अपने उपन्यास का जिक्र होते मैंने देखा है।

श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफको साहित्य सम्मान 2017 [ग्यारह लाख रुपये संलग्न] यह सम्मान मुझे विशेष रूप से 'पथरीला सोना' उपन्यास को ध्यान में रख कर दिया गया था। उस वक्त पथरीला सोना उपन्यास की जितनी प्रशंसा हुई थी वह मेरे श्रम के लिए सचमुच बहुत बड़ा अवदान था।

लिखते वक्त जरूर मैंने खून पसीना एक किया है। सम्मान उसी का प्रतिफलन है और इससे मुझे निश्चित ही अपार खुश होती है। मैंने भारत में अकसर कहा मॉरिशस में शब्दों के बीज बोता हूँ और मुझे फसल काटने के लिए भारत बुलाया जाता है।

प्रश्न - 2. आपने 17 – 18 की उम्र से हिन्दी लेखन का अभ्यास शुरु किया और एक परिपक्व लेखक के रूप में उभरते चले गये। तब तो आपके लिए परिभाषा इस तरह से बनती है हिंदी के प्रचार-प्रसार और साहित्य सृजन के लिए आप वर्षों से एक सुपरिचित नाम हैं| अब आपकी उम्र कुछ आगे बढ़ गयी है, लेकिन आप लेखन में यथावत सक्रिय हैं। इतनी उम्र में भी लिखने के पीछे आपकी कौन - सी भावना निहित है?

प्रश्न 2 का उत्तर

मैं सतहत्तर [77] पूरा करने वाला हूँ। पर अगले दिनों का गणित बनाने की प्रक्रिया में मैं सोच भी रहा हूँ पता नहीं मेरी भावी नियति कैसी होने वाली हो। पर अभी स्वस्थ हूँ और मुझे अपने लिए किसी प्रकार का अवरोध महसूस नहीं होता। इस उम्र में मुझे कुछ अधिक ही इस ज्ञान का कायल होना पड़ता है स्वास्थ्य अनमोल होता है। पर यह भी सच है इस उम्र में मैं जवान नहीं हूँ। फूटबाल खेलने के लिए मेरी जवानी होती थी, सैर सपाटे के लिए मेरे लिए गलियों की बाहें खुली रहती थीं। वह सब अब भी यहीं है, लेकिन जीवन उसके अनुकूल नहीं रहा। अब मुझे लगता है कभी का कोई साधु मुझे बहुत लुभाता है और मुझसे कहता है उसकी तरह बन जाऊँ। यह साधु होता न तो यह मेरा आविष्कार है और मेरे लिए उसकी मित्रता बड़ी प्यारी होती है। मेरी बढ़ी हुई उम्र की यह सीमा रेखा है, उस पार पाप है तो मेरा उधर जाना स्वयं में निषिद्ध है। झूठ, निष्ठुरता, छल प्रपंच, क्रोध, ईर्ष्या ये सारे मानवी विकार कभी मेरी पीठ की सवारी करते रहे हों, लेकिन अब यही उम्र है इन सब से छूट कर अपना परिष्कार कर लूँ।

यह सही है इतनी उम्र हो जाने के पीछे मेरी हिन्दी सेवा अंतर्निहित है। पन्द्रह की उम्र से मुझे हिन्दी की समझ इस कोण से आने लगी थी क्योंकि मेरा परिवार हिन्दी का संस्कार रखता था। मेरी उस उम्र में भारतीय पीढ़ी के लोगों के घर में हिन्दी का होना संस्कृति और संस्कार का पर्याय होता था। बाद में मुझमें साहित्यिक समझ विकसित होते जाने से मैं साहित्य में ढलने लगा और अब तक इसी में अपने को कायम पाता हूँ।

इस प्रश्न का एक भाग यह है इतनी उम्र में भी लिखते रहने के पीछे मेरी कौन सी भावना निहित है? उम्र तो शरीर के लिए है, लेकिन मेरा लेखक उम्र से बहुत परे है। निश्चित ही मेरे शरीर से लेखक की ऊर्जा है और इस ऊर्जा के अभाव में मैं शब्द रचना नहीं कर सकता। उम्र की बात होने पर मेरे मन में उम्र की व्याख्या इस तरह से चलने लगी है उम्र के दबाव के कारण हाथ काँपेंगे, शारीरिक शिथिलता लेखन के लिए बैठने में अवरोध बनने लगेगी और ऐसा होगा लेखन ही जंजाल सा प्रतीत होने लगे। उम्र बहुत बढ़ने से प्रज्ञा पर उसका असर पड़ता है और सोच समझ की बाती गुल होने लगती है। पर मैंने ऊपर की पँक्तियों में अपने शरीर के स्वस्थ रहने की जिस तरह महिमा गायी उसी तरह अपनी प्रज्ञा को ले कर मुझे किसी प्रकार के विचलन का खतरा अनुभव नहीं होता। इसका अकसर मैं परीक्षण भी कर लेता हूँ। रात को सोने के लिए पलंग पर जाते वक्त मेरी सोच में किसी रचना का कथ्य आ जाये तो मुझे परेशानी होती नहीं है। अगली सुबह मुझे याद रहता है रात को दिमाग में क्या आया था। तब तो लिखने का मानो तार वहीं से जुड़ जाता है और लेखन तीव्र गति से आगे बढ़ने लगता है।

अपनी लेखकीय समझ के बल पर इतना अवश्य कह रहा हूँ यह जो मैं आज लिखता हूँ यह आज का निर्माण न हो कर पचपन साल से भी अधिक समय का निर्माण है। आज अपनी सारी परिवारिक जिम्मेदारी पूरी कर लेने के बाद मैं सोचता अब मैं लेखन करता हूँ तो यह असंभव होता। लेखन अभ्यास से आता है और यह अभ्यास जीवन की तमाम उम्र का बलिदान मांगता है। मैं आज बड़ा लेखक हो जाने का दावा नहीं कर सकता, लेकिन इतना दावा तो मैं कर सकता हूँ मैंने अपनी उम्र का बहुत सारा अंश लेखन को समर्पित किया है।

प्रश्न -3. आपने अपने बचपन को पार किया और उम्र की सीढ़ियाँ चढ़ते गये। पर बचपन तो बचपन ही होता है। बचपन की स्मृतियाँ आपके अंतस में तमाम अक्षुण्ण

होंगी। आप बतायें आपके माता-पिता ने किस प्रकार से बचपन में आपको प्रेरित किया?

प्रश्न 3 का उत्तर

मॉरिशस में हम भारतीय मन और संस्कार के अवश्य हैं, लेकिन इस देश की मिट्टी से हमारा जीवन होने से इसमें हमें ढलना पड़ता है। इस प्रक्रिया में हम मॉरिशस वासी होते हैं और यही हमारी पहचान है। मैं इसी बात पर कहता हूँ मेरी जन्मभूमि मेरा स्वाभिमान है।

सन् 1946 में जन्म के बाद जब मैं उम्र की सीढ़ियाँ चढ़ रहा था उन दिनों यहाँ स्कूली शिक्षा का बहुत अभाव चलता था। उन दिनों यहाँ हिन्दी में कोई बी. ए. एम. का डिग्रीधारी होता नहीं था, लेकिन इसकी नींव पड़ रही थी। यह सौभाग्य उनके लिए होता था जो पैसे से संपन्न होते थे और उनके घरों में साक्षरता के लिए आकांक्षा पल रही हो। मेरा परिवार बहुत साधारण था। मेरे अपने सब के सब खेतों के मजदूर थे और उनके यहाँ जन्म ले कर हम जो बड़े हो रहे थे हमें भी विरासत में मजदूर का ही मानो अवदान मिल रहा था। अवदान मानें तो मैं उसी अवदान की ऊपज हूँ। मैंने अपने बारे में लिखा है मैंने पहले कुदाल थामी उसके बाद मेरे हाथ में कलम की बारी आयी थी। अब मैं देखता हूँ मेरे बारे में जो लोग लिखते हैं मेरे इस वाक्य को उद्धृत करते हैं। मुझे अच्छा लगता है, बल्कि गर्व की अनुभूति होती है।

मेरे मजदूर माता - पिता की एक शोभा थी वे विद्या के बहुत उपासक थे। यही कारण रहा उन्होंने यथासंभव चाहा उनके बच्चे साक्षर हों। उन दिनों माता पिता तो स्कूल का मतलब न के बराबर जानते थे। स्कूल विशेष रूप से पादरियों की ओर से संचालित होती थी और माँ बाप का डर होता बच्चा स्कूल जाये तो कहीं उसे ईसाई न बना दिया जाये। मेरी पढ़ाई ऐसे ही आतंक के माहौल में शुरु हुई थी, लेकिन ऐसा भी मैं अपने उस बचपन में आधा मजदूर होता था और आधा स्कूली बच्चा होने के दौर से गुजर रहा था। पर मेरी बात वहीं लौटेगी मेरे माता पिता चाहते थे मैं पढ़ूँ और मैं स्वयं पढ़ाई के लिए उत्सुक रहता था।

मेरे मजदूर पिता अनपढ़ थे और अनपढ़ता के कारण उन्हें अपना हस्ताक्षर करना न आता था। पर वे गजब के सत्संगी थे। कबीर का उनका गहरा प्रभाव था और आज

मैं इस सोच से दंग रह जाता हूँ वे कबीर का पूरा जीवन जानते थे। महाभारत और रामायण से भी वे सरोकार रखते थे और उनका विधान ऐसा कि बच्चों को तो हर हालत में माँ बाप का आज्ञाकारी बनना चाहिए। खास कर मुझसे तो बहुत चूक होती थी। मैं मित्रों के साथ तैरने नदी भागता था। खेलने में तो मैं और मस्त होता था। मेरे पिता ने मेरे लिए एक विशेष काम किया। वे पोर्ट लुईस जायें तो पता नहीं कहाँ उन्हें निराली कलम दिख जाती थी और वे मेरे लिए खरीद लाते थे। अब कलम हुई तो मुझे लिख कर उन्हें बताना पड़ता था। बताने की ही प्रतिफलन हुआ कि एक दिन मैंने हिन्दी में एक छोटी सी कहानी लिख दी। आज मैं कह सकता हूँ वही मेरी पहली कहानी थी और मानो उसी कहानी की पगंडडी चल कर मैंने कालांतर में कहानी का अपना राजपथ बनाया।

प्रश्न-4 . आप कहते हैं बचपन से आप आधे मजदूर और आधे विद्यार्थी हुआ करते थे। आपके मजदूर पक्ष के कष्ट का हम अंदाजा लगा सकते हैं। आपके आधे विद्यार्था जीवन से संबंधित मेरा प्रश्न है आपकी शुरुआती शिक्षा-दीक्षा कैसी रही? आपको कौन-सा विषय अधिक पसंद था?

प्रश्न 4 का उत्तर

मैं अपने बचपन के जिन वर्षों में पढ़ाई से जुड़ा हुआ था मेरे देश में बी.ए. एम.ए. जैसी कक्षाओं की पढ़ाई होती नहीं थी। पर उच्च स्तरीय पढ़ाई तो होती थी और मेरी दौड़ उसी के लिए थी। बचपन में मैं तय तो न कर पाता मेरी मंजिल कैसी होगी। पढ़ाई से मेरे मन में था भी नहीं कि पढ़ रहा हूँ तो इसके बल पर मुझे नौकरी मिल सकती थी। मेरे लिए पढ़ाई की परिभाषा इस तरह से होती थी पढ़ाई से ही मैं होशियार बन सकता हूँ। कोई मुझे ठग न सकेगा और किसी को इतनी सामर्थ्य न हो सके मुझे अपने इशारे पर नचा सके। जैसा कि मैंने कहा मैं आधा मजदूर और आधा विद्यार्थी होता था इसी धार पर चल कर मैं पढ़ाई में कुछ अच्छी ही तरक्की करता जाता था। मेरी पढ़ाई प्राथमिक से माध्यमिक तक तो हुई, लेकिन व्यवस्थित इसलिए नहीं क्योंकि मेरे घर की गरीबी मेरे लिए बहुत व्यवधान खड़ी करती थी। पर मैं जिस तरह से कहता हूँ लेखन की भावना मेरे लिए ईशवरीय है उस तरह विद्या भी मेरे लिए सरस्वती का वरदान है। अन्यथा मेरे गाँव और स्वयं मेरा अपना जो परिवेश था उस परिवेश में कुछ विशेष बन

पाना सपना ही हो। बचपन में कोई तय भी तो न कर पाता है भविष्य में उसे क्या बनना है। मुझे लगता है बनना प्रारब्ध से होता है और मैं स्वयं प्रारब्ध की संरचना हूँ।

मेरे गाँव में दो चीनी दुकानें थीं। उनके यहाँ कुछ खरीदें तो वे अपनी भाषा में गणित करते थे और दो चार पैसे अधिक जोड़ देते थे। पता लगने पर लोग नाराज तो बहुत होते थे और उन्हें मारने के लिए हुमच भी पड़ते थे। पर वे पैसा ज्यादा लेने की लत छोड़ते नहीं थे। दुकानें तो बस यही दो थीं और खरीदारी के लिए इन्हीं पर आश्रित रहना पड़ता था। उन दिनों मॉरिशस के सारे गाँवों में चीनियों की दुकानें होती थीं और वे गजब के बेईमान होते थे। पर अब सारे चीनी शहरों की ओर रुख कर चुके हैं और वे करोड़पति हुआ करते हैं। मॉरिशस में दो प्रतिशत चीनी हैं और वे अपनी चीनी भाषा में अखबार निकालते हैं। भारतीय खून के लोगों की भी बात कर लेता हूँ। बावन प्रतिशत हो कर भी हमारा एक भी हिन्दी अखबार नहीं है।

उन दिनों मेरे पिता हों या दूसरे हमारे जैसे लोग सब के घरों में बात इस तरह से होती थी बच्चा पढ़ ले ताकि चीनी दुकान में डट कर कह सके उसके हिसाब में गड़बड़ी करे तो उसे इसका परिणाम भुगतना पड़ेगा। मेरे पिता स्वयं मुझसे इस तरह से कहते थे पढ़ लो ताकि चीनी दुकानदार तुम्हारे साथ बेईमानी न कर सके। पिता का यह कथन मुझे गणित की ओर ले जाता था और सच कहें तो मैंने गणित में बहुत ही तरक्की की थी। स्कूल में मेरे दो प्रिय विषय रहे एक गणित और दूसरा फ्रेंच।

प्रश्न-5. आपने फ्रेंच भाषा का नाम लिया और आप बता रहे हैं यह भाषा आपको बहुत प्रिय थी। तब तो आपने फ्रेंच में अच्छी तरक्की की होगी। मैं जानना चाहूँगा आपको फ्रेंच से खास लगाव क्यों था ?

प्रश्न 5 का उत्तर

मैंने प्रश्न 4 के उत्तर में यह तो कहा स्कूल में मेरे दो प्रिय विषय रहे थे वे थे गणित और फ्रेंच। गणित इसलिए क्योंकि पिता चीनी दुकानदारों से सचेत रहने के लिए कहते थे। चीनी दुकानदारों से मोर्चा लेने के लिए बच्चों को मानो ठोंक कर कहा जाता था गणित में तुम्हें होशियार होना ही है। इस तरह से भी होता था हमें पँक्तिबद्ध खड़ा करके अंग्रेजी अथवा फ्रेंच में एक से ले कर सौ तक बोलने के लिए कहा जाता था। बड़े बच्चे

भी इसमें फेल हो जाते थे। हम गाँव के थे और हमारी मातृभाषा भोजपुरी हुआ करती था। इस भाषा को तो हम माँ की गोद में सीख लेते थे, जबकि अंग्रेजी और फ्रेंच स्कूल जा कर सीखना पड़ता था। स्कूल में मार भी तो पड़ती थी। पर अब के बच्चे उस दौर को पार कर चुके हैं। हाँ, हिन्दी जरूर यहाँ ऊँघ रही है। बड़े भी यहाँ हिन्दी में एक से सौ तक बोलने में मात खा जाते हैं।

बेईमान चीनी से सावधान रहने के लिए मैंने गणित में रुचि ली हो, लेकिन फ्रेंच के साथ मानो मेरी पटरी बहुत ठीक बैठती थी। फ्रेंच में मैंने कुछ तरक्की की और मुझे अंग्रेजी और फ्रेंच के बल पर पुलिस की नौकरी मिल गयी थी। फ्रेंच के बारे में थोड़े विस्तार से कहता हूँ। मैंने इस भाषा को अपने दिल से अपनाया था। इसे बोलने में ओठों से कुछ अधिक ही कसरत करना पड़ता है और यह कला मुझे बचपन से आती थी। आज जब मैं अपने बचपन, किशोर और यहाँ तक अपनी युवा उम्र पर अपना मन वापस ले जाता हूँ तो मुझे अपने सत्य का प्रत्यक्ष साक्षात्कार होता है। उस सत्य की परिभाषा एक यही है मैं अपने को फ्रेंच के बहुत निकट पाता था।

हिन्दी की मेरी पढ़ाई व्यवस्थित होती नहीं थी बल्कि कभी व्यवस्थित हुई नहीं। इस बारे में इस तरह से कहता हूँ सरस्वती की कृपा होगी उसने हिन्दी का वरदान मेरे माथे पर लिख दिया हो। मेरी स्कूली शिक्षा में अंग्रेजी और फ्रेंच की विशेष प्राथमिकता रही थी, लेकिन मेरा झुकाव अधिकतर फ्रेंच की ओर था। बल्कि मैं फ्रेंच ही ज्यादा पढ़ता था और मन में इस तरह से सनक बन आती थी इस भाषा में मुझे बहुत दूर निकलना है। पर फ्रेंच पढ़ने में खर्च बहुत पड़ता था और मैं गरीबीवश इसमें मात खा जाता था। फ्रांस में छपी हुई सुन्दर पुस्तकें होती थीं। हाथ में ले कर चूम लें, लेकिन दाम देख कर अपने को अवसन्न पाने लगें। मुझे फ्रेंच के लिए अवसर मिला ही होता तो मैं निश्चित ही उसे अपने जीवन का लक्ष्य बनाता और आश्चर्य नहीं मैं फ्रेंच का लेखक होता। लेखन का जज्बा तो अंतस में होता है और भाषा उसके लिए माध्मम होती है। मैं अपनी फ्रेंच भाषा को बना कर लेखन के अपने जज्बे से उसका समंवय कर लेता और मैं अच्छा ही लेखन कर पाता। पर जो न हुआ उसका मुझे दुख नहीं है। मैंने यह भी तो बहुत लिखा इस वक्त भी वही लिख रह हूँ हिन्दी ने मुझे चुरा लिया और मैंने स्वयं उसकी चोरी में जाना स्वीकार कर लिया।

प्रश्न-6. आपके जीवन परिचय में देखने को मिलता है आप अपने गाँव से अपने को बहुत जुड़ा हुआ पाते हैं। इसके पीछे क्या कोई कारण होता है?

प्रश्न 6 का उत्तर

इस प्रश्न से अलग एक बात का यहाँ जिक्र करना चाहता हूँ। भारत से जब लोग मॉरिशस आये थे उनके लिए मॉरिशस बोलना कठिन होता था। वे इस शब्द को तरह - तरह से बोलते थे। मॉरिशस का एक नाम मोरिस [टापू मरिशस] भी है और इस नाम से भी यह देश विश्व में जाना जाता है। यह फ्रेंच नाम है। फ्रांसीसी यहाँ अंग्रेजों से पहले आये थे और उन्होंने इस देश को अपनी भाषा में यह नाम दिया था।

भारतीयों ने अपनी ओर से मॉरिशस को 'मारीच' नाम दिया था और यह नाम आज की हमारी पीढ़ी के लोगों के साथ यथावत रह गया है। मैंने इस नाम से बहुत लिखा है। भारतीय यहाँ शर्तबंद आये थे जिसके लिए शब्द था एग्रिमेंट। भारतीय ने यह भी बोलने में कठिनाई अनुभव की और उनसे यह शब्द हो गया 'गिरमिटिया' और यह शब्द तो अब विश्वीय हो गया है।

प्रश्न है अपने गाँव से जुड़े रहने का मेरा कोई कारण होता हो? उत्तर इस तरह से दे रहा हूँ मुझे तो अपने देश के हर गाँव से लगाव रहा है। भारत के लोग जब पहले पहल मॉरिशस आये थे तब उनके आवास के लिए यहाँ गाँव ही होते थे। आज भी गाँव ही कहा जाता है, लेकिन उस अर्थ में नहीं जिस तरह भारत के गाँव हुआ करते हैं। मैंने इन दिनों बिहार जाने पर जो गाँव देखे हैं वे गाँव मॉरिशस में मेरे बचपन के गाँव थे। मुझसे पहले तो ये गाँव और भी ठेठ हुआ करते थे। ईख की फूस से छत छायी जाती थी और फर्श गोबर से लिपा जाता था। मेरा घर भी तो ऐसा ही था। पर मॉरिशस में अब इस तरह का घर ढूँढने पर भी न मिले। यहाँ के गाँव बहुत विकसित हैं। शहर तो न कहेंगे, लेकिन मानो ये गाँव शहर का नशा पालते हों।

मेरा जन्म फूस से निर्मित घर में हुआ और फर्श को लिपा जाता था एक लेखक हो जाने पर मैंने इसे अपने जेहन में बसाये रखा है। बल्कि मुझे इससे लिखने की शक्ति मिलती है। आज अपने गाँव से मैं रचना का उन्नयन करता हूँ और वह पूरे विश्व में पहुँचता है यह मेरे लिए अनुपम है। मैं इसीलिए स्वयं के रचना संसार पर आश्चर्य करता

हूँ और मेरे ओठों से निकल जाता है मैं ईश्वर के यहाँ बनाया गया था और मॉरिशस में जन्म ले कर मुझे उसका निर्वाह करना था।

मेरा जन्म जमीन के जिस टुकडे में हुआ था आज मेरा आवास वहीं हुआ करता है। परिवार में बँटवारा होने पर मैंने अपनी इच्छा से यही जमीन ली थी। बड़ा होने पर जब मेरी शादी हुई मेरा मकान टीन से निर्मित था। मैंने उसे कंकृट में परिवर्तित किया। मेरे गाँव का नाम 'कारोलीन' है। मैंने अपने आत्म कथ्य में इस तरह से लिखा है ---

मॉरीशस के पूर्वी प्रांत में पड़ने वाले 'कारोलीन' नाम के एक साधारण ग्रामांचल में जन्म पा कर मैं यहीं उम्र की सीढ़ियाँ चढ़ता गया। बाद में इस जगह को छोड़ने की बाध्यता अनेकों बार आयी, लेकिन मेरे भीतर एक अमूर्त सा संकल्प निभता चल रहा था कि रहना तो मुझे यहीं है। मै यहीं से दूर दूर जा कर पढ़ाई करता रहा। यहीं से अन्यत्र जा कर नौकरी की और अपने परिवेश में लौटता रहा। कालांतर में अपने बच्चों को यहीं से कहीं भी पढ़ने के लिए भेजा। मैंने यहाँ अपने जीवन की धूप छाँव को जाना है और उसे जीने में कहीं असफल हुआ तो कहीं सफलता ने मेरे कदम चूमे हैं।

प्रश्न-7. आपको नाटककार के रूप में भी तो जाना जाता है। लोगों ने आपसे प्रश्नोत्तर में संवाद किया है जिसमें आया है आप एकांकी लिखने में बहुत माहिर थे। अपने नाट्य लेखन के बारे में कुछ बतायें?

प्रश्न 7 का उत्तर

यह सही है मैंने कहानी से लेखन में प्रवेश किया था, लेकिन शुरु से नाटक में मेरी रुचि थी। मेरे देश में सरकार की ओर से नाट्य प्रतियोगिता होती थी। मैं स्वयं एकांकी लिख कर कलाकार देखता था और तैयारी के बाद दी हुई तिथि को मंचन के लिए अपने कलाकारों को ले कर थियेटर पहुँच जाता था। मुझे एकांकीकार के रूप में अनेक बार पुरस्कार मिले। मेरे कलाकार भी पुरस्कृत होते थे। पर मेरा ध्यान विशेष रूप से कहानियों में ही लगा रहता था। मैंने 1973 में मुम्बई [उन दिनों बम्बई] से प्रकाशित होने वाली 'धर्मयुग' पत्रिका को कहानी भेजी जो स्वीकृत होने पर प्रकाशित हो गयी थी। धर्मयुग के संपादक डाक्टर धर्मवीर भारती थे। उन्होंने मुझ पर हमेशा स्नेह रखा। 1975 में उनका रेडियो नाटक अंधा युग प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन में हमारी ओर से

मंचित हुआ था। धर्मवीर भारत जी के कहने पर मुझे इसका सह निर्देशक बनाया गया था। तभी पहली बार सरकार की ओर से भारत जाने का मुझे अवसर मिला था।

मुझे नाटककार के रूप में जानने से मेरे देश के रडियो केन्द्र में मुझे रेडियो नाटक के लिए बुलाया गया था। मैंने यह स्वीकार किया था। 1980 से ले कर 2000 तक मैंने हर सप्ताह शनिवार के दिन [9.30 – 10.00] आधे घंटे रेडियो नाटक प्रसारित किया। लगभग 300 मेरे लिखित रेडियो नाटक हुए। मुझे अच्छा पैसा मिलता था और यदि मैं पैसे को ध्यान में रखता तो अब तक वहाँ काम कर सकता था। पर मैंने उससे अवकाश इस कारण से लिया क्योंकि उसमें मेरा समय बहुत जाता था। पूरे देश में मेरे कलाकार होने से उनसे मिल कर मुझे उन्हें तैयार करना पड़ता था। उन दोनों महात्मा गांधी संस्थान में मेरी नौकरी थी। मैंने अपनी नौकरी पर ध्यान दिया। वह सरकारी नौकरी थी जिसके लिए समय आना जाना विशेष मायने रखता था। बाकी वहाँ जो काम करना होता था वह मैं बड़ी सहजता से कर लेता। पर सच कहें तो मैं अपने लेखन पर बहुत ध्यान देता था। उन्हीं दिनों मैंने 'पथरीला सोना' उपन्यास लिखने की योजना बनायी थी जिसे मैंने बहुत जल्द बड़े ही मनोयोग से पूरा किया।

ऐसा नहीं कि रेडियो छोड़ने पर मैंने नाटक से संबंध तोड़ दिया था। मैंने दो साल मिनिस्ट्री की ओर से नाट्य लेखन और मंचन का प्रशिक्षण देने की जिम्मेदारी भी निभायी है। इस कोण से मॉरिशस में नाटककार के रूप में आज भी मेरी पहचान कायम है। मॉरिशस के इतिहास पर आधारित मेरा नाटक 'जलती रहे मशाल' पूरे देश में मंचित हुआ था। पर मैं मानता हूँ अपने नाटक प्रकाशित करवाने पर मेरा ध्यान जाता नहीं था। अब तक तो मैंने कहानियाँ, उपन्यास, लघुकथा आदि बहुमात्रा में लिख लिये हैं। इन दिनों मैं वृहत नाटक लिखने में लगा हुआ हूँ। ईश्वर की कृपा हुई तो मेरे मन में है पचास तक वृहत नाटक तो मुझे लिखने ही हैं।

प्रश्न-8. आपके रेडियो नाटकों की संख्या तीन सौ से अधिक है यह संख्या जरूर बहुत विशाल है। उनका विषय कौन- सा रहा ? उसकी प्रस्तुति में आपने किन-किन बातों का ध्यान रखा?

प्रश्न 8 का उत्तर

अपने देश में मैं पहला आदमी हुआ जिसने इस तरह धाराप्रवाह रेडियो नाटक प्रस्तुत किये। रेडियो केन्द्र में इस तरह का कार्यक्रम न होने से इसकी कमी महसूस की गयी थी और मुझे योग्य मान कर वहाँ के लिए बुलाया गया था। पर मैं तो स्वतंत्र रूप से लेखन करने वाला लेखक हूँ। मैंने अब तक अपनी रचनाओं में अपनी स्वतंत्रता का पूरा निर्वाह किया है, लेकिन रेडियो की बात एकदम दूसरी थी। वह अर्द्ध सरकारी रेडियो केन्द्र था और जाहिर था वहाँ राजनीति के प्रति सावधान रहना पड़ता था। मेरे नाटक जब प्रसारित होते थे तो निदेशक सुनते थे। वे बाद में मुझे बुला कर प्रसारित नाटकों के बारे में मुझ से बात करते थे। कहने का उनका तकिया कलाम था राजनीति से बच बचाव करता रहूँ। वहाँ ऐसा होता था पल भर में लोग अपनी नौकरी खो देते थे। निदेशक एक मुसलमान था। उसका नाम सलाम अहमदी था। बड़ा नेक इन्सान था। उससे मुझे कभी परेशानी नहीं हुई। बल्कि उसी के बुलाने पर मैं हिन्दी नाटक के लिए वहाँ गया था। पर वहाँ मेरी रुकावट होती भी तो मुझे परेशानी नहीं होती क्योंकि वहाँ मैं फ्री लान्सेर था और महात्मा गांधी संस्थान में संपादक के रूप में मेरी स्थायी नौकरी थी।

मैं रेडियो के अपने जिन लघु नाटकों की बात करता हूँ वे साहित्यिक कसौटी से लिखे हुए नाटक होते नहीं थे। भारत के मेरे मित्र दीपक पांडेय को पता था मैं रेडियो केन्द्र से नाटक प्रसारित करता था। उन्होंने उन नाटकों को पुस्तकाकार में प्रकाशित करवाने का विचार मेरे सामने रखा था। इस प्रस्ताव से मुझे खुशी तो हुई थी, लेकिन मैं अपनी खुशी को कार्य रूप देने की स्थिति में नहीं था। बात यह थी उन दिनों मैं हाथ से लिखता था। नाटक रियर्सल के लिए कलाकारों के पास जाने पर अकसर उन्हीं के यहाँ रह जाता था। एक सप्ताह के लिए मैंने नाटक लिख कर ज्योंही दिया अगला सप्ताह मानो मेरा दरवाजा खटखटाने लगता था। फिर भी मैंने पूरे बीस साल इसका निर्वहन किया था। उसे अपने लिए कठिन परीक्षा कह सकता हूँ।

मैंने यह तो लिखा मैं अपने उन नाटकों को साहित्यिक कसौटी से परे मानता था। बस उसमें नाटक का भाव आ जाता था। पर मैं उसे मजाक नहीं बनाता था। मैं समाज और राष्ट्र को बड़ी निष्ठा से अपने ध्यान में रखता था। मैंने प्रेमचंद की कहानी कफन का रेडियो नाटक में रूपांतरण किया है। अंग्रेजी फ्रेंच की तमाम कहानियों पर मेरी नजर जाती थी और मैं उन्हें रेडियो नाटक बना लेता था। पर मेरे नाटकों का दायरा

इससे भी आगे था। मैं अपने देश की तमाम तरह की बातों को ले कर अपने नाटक का सृजन करता था। लोग मुझे शाबाशी देने के लिए फोन भी करते थे और प्रत्यक्ष रूप से बातें करने पर कहते थे उन्हें मेरे नाटकों से क्या मिला।

मैं ऐसा मानता हूँ रेडियो नाटक का वह भी मेरा एक युग था।

प्रश्न-9. आपकी बहुत सी प्रकाशित कृतियाँ हैं जिनमें भारतीय संस्कृति का सुन्दर समावेश पाया जाता है। आप अपनी ओर से बतायें भारतीय संस्कृति का कौन सा पक्ष श्रद्धा और प्रेमपूर्वक आपके अंतस में अकाट्य रूप से विद्यमान है?

प्रश्न 9 का उत्तर

मॉरिशस तीन शताब्दी पूर्व एक वीरान देश था। हिन्द महासागर से घिरे इस देश को फ्रांसीसी गोरों ने अंग्रेज सरकार से मिल कर ईख के खेतों में परिवर्तित करने का निश्चय किया था और इसके लिए भारतीयों को मजदूर के रूप में लाया जाना शुरु हुआ था। इतिहास का यह पन्ना अब तो बहुत सरेआम है। यहाँ एक और इतिहास हुआ जिसे डोडो पक्षी से जोड़ कर देखा जाता है। यह पक्षी एकमात्र मॉरिशस में होता था, लेकिन अब इसकी गिनती समाप्त प्रजातियों में की जाती है। फ्रांसीसियों से पहले डच, अरब और पुर्तगाली यात्री के रूप में यहाँ आते थे। डोडो पक्षी को मार कर खा जाने और यहाँ तक कि उसकी नस्ल को खत्म कर देने का दाग डच, और पुर्तगाली के माथे रह गया।

मनुष्य का जो इतिहास इस देश में प्रबलता से अपनी छाप बनाये रखता है वह तो बस भारतीयों का ही है। उनके हाथों की मेहनत से यह इतिहास है। भारतीयों के इतिहास को देह मात्र से जोड़ कर देखा नहीं जा सकता। यह सर्वमान्य बात है मनुष्य का इतिहास उसकी संस्कृति, संस्कार और सभ्यता से बनता है। भारतीयों में ये तीनों गुण विद्यमान थे और आज हम उनकी संतानें उनके उन्हीं गुणों की नींव पर अपने को खड़ा पाते हैं। यह हमारा स्वाभिमान कहलाता जो चिपकाया हुआ न हो कर हमारे अंतस में अपनी पैठ गहरी बनाये रखता है।

मैंने अपने देश के वर्तमान जीवन को लिखने के साथ इतिहास को भी लिखा है,

बल्कि इतिहास को तो ज्यादा ही लिखा है और मेरे उस लेखन में यह छाप गहरे रूप से अंकित है हमने अपने न रहे पूर्वजों से संस्कृति, संस्कार और सभ्यता तो आद्यंत लिया है। यह एक यात्रा जैसी है जो यहाँ प्रथम पहुँचे भारतीयों से ले कर हम तक पहुँचा है और हमारी कोशिश यह होती है भविष्य में भी इसकी यात्रा जारी रहे। मैंने अपने देश का इतिहास लिखने में इस बात का ध्यान रखा है यहाँ भारतीय संगीत कितना गूँजा है। भारत के त्योहार, रीति रिवाज यहाँ तक कि खान पान से ले कर पहनावे में वे लोग कितने भारतीय हुआ करते थे। त्योहारों से वे भारतीय हुए तो यह मुझसे और भी नहीं छूटा है। ऐसा तो हुआ है पाश्चात्य के प्रभाव से बहुत कुछ विलुप्त हो गया है और बहुत कुछ लुप्त होने के कगार पर खड़ा है। सच पूछें तो यहीं से हमारा दायित्व शुरु होता है। अब तो यहाँ अपने ही लोग अपनी जड़ को नकारते हैं और उन्हें घर का भूला कह कर शोक मनाने की एक परंपरा बन रही है। मैं ऐसी स्थितियों परिस्थितियों का अध्ययन बहुत करता हूँ और यथासंभव अपनी रचनाओं से मानो अंधेरे में इस भावना से प्रकाश बिछाने की कोशिश करता हूँ कि जड़ रहेगी तभी उसके पेड़ होंगे, फूल से ले कर उसके पौधे होंगे। यह सब लिखते मुझे बहुत अच्छा लगता है और मेरी अनुभूति ऐसी बनती है जो टूट रहा है, बिखर रहा है उसे शब्दों का अर्घ्य चढ़ा कर अपने तरीके से उसका सींचन कर रहा हूँ।

प्रश्न 10. आपकी रचनाएँ पढ़ने की प्रक्रिया में यह बात एक तरह से छन कर सामने आ जाती है भारतीयता की पुष्टि के लिए लिखा गया है। भारत और भारतीयता के विविध आयाम हैं। उसकी संस्कृति को तो अगम अपार कहेंगे। भारतीय संस्कृति में आपको कौन-कौन -सी बातें आकर्षित करती है ?

प्रश्न 10 का उत्तर

सच पूछें तो भारतीय संस्कृति में क्या नहीं हो जो मुझे आकर्षित न करता हो। बल्कि ऐसा है वह तो मेरे अंतस में है और मैं उसे ही गाता हूँ, गुनगुनाता हूँ और बड़े मनोयोग से उसे जीता हूँ। आकर्षण तो बाहरी होता है। उसका प्रभाव पड़ने से वह करीब आता जाता है। उसके लिए मानो द्वार खुला रखें तो घर में प्रवेश कर जाता है। घर में प्रवेश करने से वह घर में रहने वालों के मन और आत्मा में भी अपने लिए स्थान

बना लेता है। मन आत्मा में जो प्रवृष्ट हो जाता है उसे निकालना सहज नहीं होता।

मॉरिशस में भारतीय वंशज हों, अफ्रीकी या यूरोपीय मन और कद काठी के लोग हों इन सब की संस्कृति अपने पूर्वजों के देश से है। अफ्रीकियों ने यहाँ अपने देश की संस्कृति खो दी है और वे यूरोप की संस्कृति को अपना चुके हैं। बाकी जो यूरोपीय हैं वे अपनी संस्कृति में बहुत सक्रिय हैं। यहाँ कभी ऐसा होता था पादरी बाइबिल की छोटी प्रतियाँ ले कर भारतीय वंशजों के घर पहुँचते थे और इस बात की धुन पकड़ लेते थे यह प्रति तो आपके घर में होनी ही चाहिए। मैंने स्वयं अपने बचपन के दिनों में देखा था पादरी हमारे घर आते थे और मेरे माता पिता से एक तरह से जबरदस्ती करते थे उनसे बाइबिल की प्रतियाँ ले कर अपने पूजा कक्ष में रख लें। इस तरह की तमाम बातें हैं जिनमें भारत विरोध न जाने कितने जहर भरे पड़े हैं। मैं ऐसा नहीं कहूँगा दूसरे धर्मों में उबासी है। मैं कहूँगा सभी संस्कृतियों की अपनी महत्ता है और वे जहाँ जैसे हैं अपनी परिभाषा से पल्लवित और पुष्पित होती रहें। मैं अपने घर में अपनी संस्कृति की महत्ता जानता हूँ और उसे बचाने की कोशिश करता हूँ। लेखक होने से मैं अपने को एक प्रचारक भी मानता हूँ। मेरे शब्द मेरे औजार हैं और मैं इन्हीं से काम लेता हूँ।

जैसा कि मैंने कहा मॉरिशस की अपनी संस्कृति नहीं होती, वह समंदर पार लोगों के साथ आयी है और यहाँ मन आत्मा में बसी हुई है। मुझे बचपन से भारतीय संस्कृति से प्रेम था क्योंकि मेरे घर का यही पाठ था। संस्कृति मेरे लिए हिन्दी है, पूजा पाठ है, रहन सहन है। मैं इसी के लिए अपने घर का दरवाजा खोले रखता हूँ। पर ऐसा भी है अब विकृति का युग है और मानो घर घर विकृति का नाच मचा हुआ है। पूजा पाठ है तो वहाँ पंडित पुजारी स्वार्थ की कुंडली मारे बैठे हुए हैं। अब हवन दो रुपये में नहीं होता। पंडित अपनी कार में आयेगा और कार से उतरने पर उसके कान से मोबाइल सटा हो। यह सब मिला कर उसका दाम होता है। पर इन सारी विषमताओं को छोड़ कर मैं वहीं लौटता हूँ मेरे लिए हवन की संस्कृति दो रुपये की ही होती है और वह संस्कृति मेरे लिए अनमोल है।

प्रश्न -11. आपने विविध विधाओं में लेखन किया है। अपनी कहानियों से आपकी पहचान बन चुकी थी। तद्पश्चात आपने उपन्यास लेखन में अपने को सक्रिय किया और यहाँ भी यशस्वी हुए। इसी बात पर कहा जाता है उपन्यास के क्षेत्र में आपका विशिष्ट

योगदान है| उपन्यास लिखने की प्रेरणा कहाँ से प्राप्त हुई ?

प्रश्न 11 का उत्तर

मैंने एक प्रश्न के उत्तर में लिखा मेरे देश में तो फ्रेंच भाषा की धाक अधिकाधिक बनी होती है। देश की राष्ट्र अंग्रेजी है, लेकिन एक पूरा अखबार यहाँ अंग्रेजी में नहीं निकलता। लोगों ने प्रयास करके देख लिया है। अंग्रेजी में पाँच हजार प्रतियों से शुरु करने पर वह संख्या घटने के लिए ही होती है बढ़ने के लिए नहीं। कमतर होते - होते संख्या सौ पर आ जाये तो स्पष्ट हो जाता है अब उसके अंत की घोषणा कर दी जाये। हिन्दी की बात करना तो मेरे लिए और भी कष्टदायी है। पर इसका मतलब यह नहीं कि हिन्दी के प्रति मेरे मन में किसी प्रकार का निरुत्साह होता है। मैं अपने दिल से कहता हूँ मुझे हिन्दी के लिए बनाया गया है और मैं स्वेच्छा में इसमें अपनी हाँ की मुहर लगाता हूँ। जैसा कि प्रश्न है मैंने उपन्यास के क्षेत्र में विशेष योगदान दिया है मैं अपने को इतना बड़ा माहिर तो नहीं मानता, लेकिन ऐसा तो अवश्य है मैंने अपने देश में हिन्दी उपन्यास की कमी को बहुत हद तक पूरा किया है। हिन्दी में यहाँ बहुत से लोग उपन्यास लिखने लगेंगे तो मेरी गिनती भी उन्हीं लोगों में होने लगेगी, लेकिन उपन्यासकार न होने के कारण मेरा नाम थोड़ा ऊपर ही तो रहेगा।

मैंने कहानी से लिखना शुरु किया था और मेरे लिए ऐसा है मैंने अपने कहानी लेखन को ही उपन्यास में विस्तृत किया है। अभी तक के लिए देश में अभिमन्यु अनत को ही उपन्यास में सब से ऊपर माना गया है और यह सच भी है। बाद में मैंने उपन्यास लिखना शुरु किया और हम दोनों अच्छे मित्र ही रहे। अब अभिमन्यु अनत दिवंगत हो चुके हैं और मैं अपने जीवन से जीवित रह कर जैसे तैसे उपन्यास लेखन में अपने को तपा रहा हूँ। अब मैंने दर्जन से अधिक उपन्यास लिख लिये। मेरे उपन्यास पढ़ने वाले मुझे लिखने लगे उन्हें लगता है मेरे उपन्यास हिन्दी जगत में अपना एक कोना मजबूत कर रहा है तो यह मेरे लिए निश्चित रूप से आत्म गौरव का प्रतीक बन जाता है। मैं उपन्यास लेखन से जुड़े रहने पर ऐसा मानता हूँ यहाँ मेरे देश में उपन्यास लिखना मानो काँटेदार जंगल में अपने लिए पगडंडी बनाने जैसा है। हिन्दी यहाँ न के बराबर बोली जाती है। घर, परिवार और रोजमर्रा के जीवन में हिन्दी न होने से मैंने महसूस किया है यह भाषा मुझे दो लाख शब्दों का उपन्यास लिखने के लिए शब्द देने में मात खा जाती

है। यहाँ घरों में चम्मच नहीं बोली जाती, छुरी शब्द सुना नहीं जाता, जबकि उपन्यास के लिए मुझे तो हर हालत में ये शब्द चाहिए। यहाँ कोई लड़का शायद ही हिन्दी में किसी लड़की को चूमता हो। पर मुझे तो हिन्दी के अपने उपन्यास में लिखना होगा बगीचे में हिन्दी भाषा में प्रेम चल रहा है। मैंने यह लिखा है इसलिए भी माना जाता है मेरे देश में इतनी हिन्दी तो अवश्य है।

प्रश्न-12. आपने पथरीला सोना उपन्यास पहले तीन खंडों में लिखा था। इसके बाद आपने और तीन खंड लिख कर इसे छ: खंडों में पहुँचा दिया। तद्पश्चात पथरीला सोना उपन्यास के चार, पाँच और छ: खंड लिखने के पीछे पीछे कारण क्या था?

प्रश्न 12 का उत्तर

लिखने की आदत होने से मेरे साथ ऐसा हो गया है मैं बड़ी तो बड़ी छोटी बातों पर भी बहुत ध्यान देता हूँ। यहाँ मैं एक बहुत बड़ी बात का जिक्र करना चाहता हूँ। यह बड़ी बात मेरे लिए अति पावन और ईश्वरीय जैसी महत्ता रखती है। ऐसा नहीं कि यह बात मैं पहली बार लिख रहा हूँ। यह बात लिखने के लिए अकसर अवसर आते रहे हैं और इसे फिर – फिर लिखने के लिए मेरे भीतर एक संवेग सा पैदा हो जाता है। सन् 2010 में इस बात की जड़ पड़ी थी। मैं महात्मा गांधी संस्थान की संपादन वाली अपनी नौकरी से अपनी जन्म तिथि 11 जून को रिटायर हुआ था। वर्ष सन् 2006 था। मेरे पास अब वक्त ही वक्त होता जिसे मैं लेखन में समर्पित करने का महत्वाकाँक्षी था। इससे पहले मुझे कम्प्यूटर पर लिखने की आदत नहीं पड़ी थी। मैं जब पूरे समय घर रहने लगा तभी मैंने कम्प्यूटर सीखने का निश्चय किया। मैंने दस बारह साल के अपने एक नाती से पहले पहल सीखा। इसके बाद अपने छोटे दामाद की सहायता से चार पाँच महीने में कम्प्यूटर की आदत बनायी और अब मैं लिखता तो पथरीला सोना उपन्यास ही लिखता। बात यह थी मैंने इस उपन्यास का विस्तृत फलक तैयार कर लिया था। इस बात में किसी प्रकार का झूठ नहीं पिछले पचीस साल से इसकी तैयारी मेरे मन में चलती आ रही थी।

प्रश्न के आधार पर उत्तर इस तरह से दे रहा हूँ लिखने के लिए मेरे पास तीन खंडों की ही तैयारी थी, लेकिन मैं छ: खंडों में कैसे पहुँच गया इसके पीछे बहुत बड़ी बात है।

ऊपर में मैंने बड़ी बात की जो पृष्ठभूमि बांधी अब उस बड़ी बात का खुलासा कर रहा हूँ। वह बड़ी बात इस तरह से थी मैं पथरीला सोना उपन्यास के तीन खंडों के प्रकाशन के लिए स्वयं भारत गया था। श्रद्धेय डाक्टर नित्यानन्द तिवारी जी ने दिल्ली विश्व विद्यालय के साउस कंपस में दो महीने के लिए मेरे रहने की व्यवस्था की थी। उन्होंने वहीं पढ़ रहे विजय मणि त्रिपाठी नाम के विद्यार्थी को मुझे सहायता के लिए कह दिया था। विजय ने समचुच मेरी बहुत सहायता की। इन दिनों वे दिल्ली विश्व विद्यालय में ही अध्यापन से जुड़े हुए हैं।

जो बड़ी बात मेरे लिए थी वह इस तरह से थी श्रद्धेय डाक्टर नित्यानन्द तिवारी जी से मैंने कहा था पथरीला सोना शीर्षक से अपने देश के आरंभिक इतिहास पर आधारित तीन खंडों में उपन्यास लिखा है जिसके प्रकाशन के लिए भारत आया हूँ। उन्होंने मुझसे कहा था तब तो इसे और आगे बढ़ाने के लिए बहुत संभावनाएँ हैं। यही मेरे लिए बड़ी बात थी और मैं इसके लिए अपने को विकल पाने लगा था। मैंने डाक्टर नित्यानन्द तिवारी जी को फोन पर कहा था आपके कथनानुसार उसे आगे बढ़ा रहा हूँ। उन्होंने मुझे शुभ कामना दी थी जो मेरे लिए अनमोल आशीर्वाद था। मैंने पथरीला सोना उपन्यास के और तीन खंडों की रूपरेखा बनायी और दो साल के बीच लिख कर प्रकाशित भी करवा दिया।

प्रश्न-13. आपने डाक्टर नित्यानन्द तिवारी जी की बात सच कर दिखायी इस उपन्यास को और आगे बढ़ाया जा सकता था। हमारे पास इस उपन्यास के छ: खंड पहुँच गये, लेकिन आप अब भी अपने इस उपन्यास को पूरा न मान कर इसे और आगे बढ़ाना चाहते हैं। मतलब इसके सातवें खंड का विचार आपको आने लगा है। अब आप बताइये सातवें खंड पर काम कहाँ तक पहुँचा है?

प्रश्न 13 का उत्तर

जैसा कि मैंने बताया मैंने पथरीला सोना के तीन खंड पहले लिखे थे, फिर दूसरी योजना के अंतर्गत तीन खंड लिखे। इसकी कड़ी में सातवाँ खंड किस कारण से पुस्तकाकार में आता यह मैं यहाँ बताने जा रहा हूँ। सच यह है मैंने सातवाँ खंड सन् 2021 में लिख कर पूरा कर दिया था और प्रकाशक के यहाँ भेज भी दिया था। उधर से

मुझे उसे प्रकाशित करने का उत्तर अविलंब मिल गया था, लेकिन प्रकाशन का मेरा अनुभव सच ही होता जा रहा है एक साल कहा जाता है तो वह आश्वासन दो साल में परिवर्तित हो जाता है। पथरीला सोना सप्तम खंड के साथ भी यही हो रहा है। पर इतना तय तो है वह छप जाने वाला है।

मैंने पथरीला सोना उपन्यास के सप्तम खंड की भूमिका में लिखा है अब इसे आठवें खंड में ले जाने का मेरा विचार नहीं है जो मेरा अंतिम निर्णय है। यह निर्णय इसलिए क्योंकि मुझे और भी बहुत कुछ लिखना है। मैं बहुत सारी कहानियाँ लिखना चाहता हूँ। लघुकथा और मॉरिशस के वर्तमान जीवन पर आधारित उपन्यास लिखने के विचार मेरे भीतर ज्वार भाटे मचाते रहते हैं। मैंने नाटक लिखे हैं, लेकिन देखता हूँ इसमें मेरी सक्रियता कुछ कम रही है। तब तो इसे भी मुझे आगे बढ़ाना है और मैं बढ़ा भी रहा हूँ। बल्कि इधर के दिनों में निरंतर नाटक ही लिखते जाने का मेरा विचार है। मैं अपनी बात दोहरा रहा हूँ मैं कविता नहीं लिखता। मैं कथाकार हूँ और कथाकार ही रहना चाहता हूँ। मुझे लगता है कथा साहित्य को मैंने साध लिया है और उसने भी मुझ पर बहुत कृपा की है तभी तो उसमें और भी आगे जाने का मेरा उत्साह बना रहता है।

पथरीला सोना के प्रथम तीन भाग मैंने अपने स्वयं के लेखन के तकाजे पर लिखा था। इसके बाद तीन खंड मैंने डाक्टर नित्यानंद तिवारी जी से प्रेरित हो कर लिखा। सातवाँ लिखने के पीछे मेरे लिए प्रेरणा के स्रोत पाठक रहे। फेसबुक में एक अच्छे लेखक के रूप में मेरी पहचान बनी हुई है। वहीं से लोगों की मांग आती रही इसका अगला अर्थात सातवाँ खंड लिखूँ। मैंने लिखा और मेरा विश्वास है दमदार ही लिखा है। पाठक यह पढ़ने पर मानेंगे मॉरिशस की एक सार्थक कृति उन्हें पढ़ने को मिली है।

प्रश्न 14. मैं पथरीला सोना उपन्यास के छः खडों को ध्यान में रख कर एक प्रश्न कर रहा हूँ। इन छ: खंडों में लगभग छः सौ पात्रों को ले कर आप चले हैं। मतलब एक खंड में सौ पात्र। अब इसके सातवें खंड के यदि सौ पात्र हों तो सात सौ पात्र हो गये। आप अपनी ओर से कहें इतने सारे पात्रों को साथ ले कर चलना आपके लिए कैसा रहा होगा?

प्रश्न 14 का उत्तर

यह सही छ: खंडों में छ: सौ के लगभग पात्र हैं, किंतु सातवें खंड में पात्र ज्यादा

नहीं हैं। पचास तक हों तो इस सात खंडीय उपन्यास में छ: सौ पचास के आस पास पात्र तो निश्चित ही हैं। मैंने लगभग बीस साल पहले जब इसका पहला खंड लिखना शुरु किया था तब मेरी अवस्था साठ को पहुँच रही थी। अब जब सातवाँ खंड मैंने लिखा मैं पचहत्तर पार कर दिया था। मैंने अनुभव किया शारीरिक क्षमता पहली जैसी नहीं रही। पर मेरा दावा तो इतना जरूर है मैंने दिमाग से लिखा तो मेरा दिमाग दुरुस्त ही था। मुझे लिखने में किसी प्रकार की रुकावट की अनुभूति हुई ही नहीं। पर ऐसा भी था इतने पात्रों को ले कर इसका निर्वहन करना सहज नहीं था।

मुझसे पूछा जा सकता है मैंने इतने पात्र लिये क्यों? यदि यह प्रश्न मेरे सामने आये तो मैं विनम्रता पूर्वक कहूँगा यह किसी प्रकार का मेरा प्रदर्शन या हठ नहीं है। मेरे इस सात खंडीय उपन्यास के लिए मुझे इतने पात्रों की आवश्यकता पड़ी और मैंने उनका उपयोग किया। इसके प्रथम तीन चार खंड इतिहास से संबद्ध होने से मैंने भूमिका में लिखा है जो लोग शती से भी ज्यादा वक्त पहले दिंवगत हो चुके थे और वे आकाश में जहाँ भी हों मैंने उनका आवाहन किया और उन्होंने मेरे इस बहु पृष्ठीय उपन्यास के लिए आना बड़े प्यार से स्वीकार किया। मेरा काम इस तरह से हुआ जिसके लिए जो भूमिका होती उस हिसाब से मैं शब्दों का रेला बिछाता चला जाता। रावण और राम दोनों पात्र अमर कवि तुलसीदास के ही तो हैं। जहाँ राम को बिठाना पड़ा है उन्होंने बिठाया है और दोनों को भिड़ाना जरूरी हुआ तो अवश्य भिड़ाया है। मेरा लेखन भी ऐसा ही था। आततायी थे तो यातना के शिकार लोग भी थे। जरूर मैं पीड़ित लोगों के साथ था और मैंने इतना विश्वास तो अवश्य अर्जित किया है पीड़ित लोगों की पक्षधरता में मैं पूर्णत: सफल हुआ हूँ।

पर हाँ, इतना जरूर है इस उपन्यास ने मुझे बहुत छकाया और विक्षिप्त जैसी हालत में पहुँचाया है। मेरे परिवार के लोग मेरी हालत देखने पर कहते थे अब और आगे न लिखो। मेरी पत्नी जब भी रात को जागी मुझे लिखते ही देखा। पर वे दिन अब बीत गये। अब उपन्यास सामने है। मैं जब तक जीऊँगा मेरी आत्मा मुझसे पूछती रहेगी क्या वह मैं ही था लिखने के जुनून के सिवाय और कुछ जानता ही नहीं था?

प्रश्न-15 . हम जानते हैं मॉरिशस में हिन्दी में अनेक विधाओं में लेखन हो रहा है। यह विश्व हिन्दी की बढ़ोत्तरी का एक आशातीत संकेत है। बल्कि ऐसा है भारतेतर हिन्दी

देशों में सब से अधिक मॉरिशस में ही हिन्दी का लेखन हो रहा है। अच्छा होता आप बताते वहाँ के लेखक कवि किन मुद्दों को अपने लेखन में केन्द्रित कर रहे हैं?

प्रश्न 15 का उत्तर

मैं इस बात की चर्चा करता रहता हूँ मॉरिशस में धर्म की भावना से हिन्दी को अपनाया गया था। मैं इसी बात से आगे बढ़ते हुए अब इस तरह से कह पाने की स्थिति में अपने को पाता हूँ अब मॉरिशस की हिन्दी को दो कदम आगे बढ़ने में गहरी रुचि हुई है और वह बढ़ी भी है। अब यहाँ हिन्दी के विद्यार्थियों के लिए हिन्दी धर्म संस्कृति के मंत्र न हो कर क्रांति और विद्रोह की भाषा होती है। पुराने लेखकों को भी अपना तेवर बदलना पड़ा है। हिन्दी सब के लिए संघर्ष की भाषा बन रही है और इसी रूप में यहाँ हिन्दी निरंतर आगे बढ़ रही है। यह दूसरी बात है इस तरह से कह तो नहीं सकते हिन्दी में यहाँ खास पहाड़ तोड़ा जा रहा है, लेकिन पहाड़ तोड़ने जैसा विचार तो अवश्य ही धधक रहा है। यहाँ के लेखक कवि अब समझौता नहीं करते, बल्कि अपने सामने अपने प्रश्न रखते हैं।

मॉरिशस में अब समस्याएँ तो राजनीति से ही ज्यादा हैं। हिन्दी के लेखक कवि अब यहाँ इस तरह से लिखते हैं राजनेता यदि तुम देश को खुशहाल बनाने में असफल होते हो तो तुम्हें वोट के लिए चिल्लाने से शर्म आनी चाहिए। पार्टी बदलू राजनेता यहाँ बहुत पाये जाते हैं और उनसे निचोड़ यही बनता है वे अवसर की ताक में होते हैं। कल कोई विरोधी राजनेता सरकार की भर्त्सना कर रहा हो, लेकिन वही सरकारी पार्टी में अपने को विलय करके मंत्री बन जाता है और अब वह सरकार को ही गाता है और मानो सरकार को ही ओढ़ता और बिछाता है।

यहाँ के हिन्दी लेखक आक्रोश से अब यही लिख तो रहे हैं, लेकिन मेरा दुख इतना शेष तो रहेगा मॉरिशस के जवान उस गति से लिख नहीं रहे हैं जितने की उनसे हिन्दी स्वयं अपेक्षा कर रही है। बात यह भी है हिन्दी यहाँ नौकरी देने में ज्यादा सक्षम नहीं है जबकि हर पढ़ने वाले विद्यार्थी की अपेक्षा तो नौकरी के लिए ही होती है। भविष्य में मॉरिशस का हिन्दी लेखन कौन सी करवट लेगा और हिन्दी स्वयं यहाँ अपनी उपस्थिति किस रूप में स्थापित रख पायेगी इसका निर्धारण तो भविष्य में ही हो

सकता है, लेकिन मैं आशावादी अवश्य हूँ।

प्रश्न-16 . आपके लेखन से जहाँ तक हमें पता चलता है आप भारत का आद्यंत वंदन करते हैं। इसके पीछे भावना तो यही होगी भारत के साथ आपका खून का रिश्ता है। इस रिश्ते की जड़ वहाँ से है आपके पूर्वज भारत से हैं। भारत और मॉरीशस इन दोनों देशों के तंदुरस्त संबंधों के कौन-से कारण हो सकते है, आपकी दृष्टि से?

प्रश्न 16 का उत्तर

भारतीय मजदूरों को पहली बार सन् 1834 में मॉरिशस लाया गया था। यहाँ उन्हें संताप पहुँचा, लेकिन वे भारतीय संस्कार में अक्षुण्ण रह गये। मैंने अपना एक सर्वेक्षण यहाँ लिख रहा हूँ। अपने इस सर्वेक्षण का मैंने अपने लेखन में बराबर उपयोग किया है। मेरा सर्वेक्षण इस तरह से है पहले जब भारतीय यहाँ आये थे क्या जाति परिवर्तन के वे शिकार होते थे? मेरा सर्वेक्षण इस बात पर पहुँचा है चाहे कष्ट अनंत होते थे, लेकिन अपने धर्म और जाति के लिए लोग सतर्क रहते थे। उन दिनों भारतीयों में नियम इस तरह से होता था कोई जाति छोड़ कर चला जाये तो उसके साथ भूल से भी कोई संबंध नहीं रखेगा। उन दिनों और आज की तुलना से देखें तो मॉरिशस में अब जाति परिवर्तन की लहर चल रही है, लेकिन इसे ध्वस्त करना असंभव हो गया है। बात यह है आज समाज का अंकुश माना ही नहीं जाता है। निरंकुश होना समाज के लिए घातक होता है। उससे राष्ट्र तक बिगड़ जाता है। आज मॉरिशस में यही नशा पल रहा है। ऐसे में मैं तो यही कहूँगा पुराने दिन ही यहाँ भारतीयता के लिए अच्छे साबित होते थे। माना कि उन दिनों सामाजिकता में बुराइयाँ भी बहुत होती थीं। पंडे पुजारी ठगी बहुत करते थे। स्वयं हिन्दुओं में छोटे – बड़े का भेद भाव पलता था। मार काट तक मच जाती थी। पर उस विषमता को हटा कर बात करें तो भारतीयता का प्रवाह गतिमान ही रहता था।

भारत और मॉरिशस को जोड़ने के बहुत से स्रोत हैं। भारत की तरह यहाँ मंदिर पाये जाते हैं। पूजा, व्रत, शादी, संस्कृति, खान पान, रीति रिवाज सब में यहाँ वही स्थापित है जो भारत की अपनी सांस्कृतिक संपदा है। इतना तो अवश्य है भारत की तरह चाहे यहाँ यथावत देखने को न मिले, लेकिन भावना तो निश्चित ही भारतीयता से

ओत प्रोत है।

प्रश्न-17. आप इतना तो निश्चित है आप अपनी सामर्थ्य से लेखन में लगे रहते हैं। आपके बारे में पढ़ने का मिलता रहा है आपने अपना जीवन हिन्दी लेखन को समर्पित कर दिया है। भारत से बाहर का कोई आदमी इस तरह हिन्दी का अनन्य प्रेमी हो यह हमें अवश्य आह्लादित करता है। आपसे प्रश्न यह क्या इसके पीछे और कोई विशेष शक्ति मानते हैं?

प्रश्न 17 का उत्तर

मैं अपने पुरुषार्थ पर बहुत भरोसा करता हूँ। किसी काम में लग जाऊँ तो उसे पूरा करने की मुझे धुन चढ़ जाती है। वैसे आदमी को तो बुरा करने की भी धुन चढ़ती है। मनुष्य होने से मैंने भी बुरा किया है। पर जहाँ तक मुझे याद है मैंने बुरा शुरु तो किया है, लेकिन उसे कभी पूरा नहीं किया। यह मेरी मनुष्यता की जीत होती थी। मैं ऐसा मानता हूँ अपनी मनुष्यता की जीत से ही मेरा व्यक्तित्व बना है और उसी के शिखर पर आज खड़ा रह कर देखता हूँ मेरा सम्मान किया जाता है।

मुझे अपनी एक बुराई इस वक्त याद आ रही है। हम कुछ मित्र रात को फिल्म देख कर पैदल घर लौट रहे थे। एक पेड़ में पक्की लीची सामने में थी और चांदनी रात में उस पर खूब प्रकाश पड़ रहा था। दो मित्रों ने लीची चुराने की योजना बनायी और मैं उसमें शामिल हो गया। पर मैंने हार मानी और उनसे कहा मैं चोरी नहीं करूँगा। मैं चोरी न करता तो वे भी पीछे हटे, क्योंकि उन्हें डर हुआ मैं यह रहस्य प्रकट कर दूँगा। हम घर चले आये थे और अगले रोज मेरे पिता ने मुझसे कहा था मुनुआ तेगा ले कर पेड़ के नीचे बैठा था। एक रात पहले उसके उस पेड़ से बहुत सारी लीची चुरा ली गयी थी। जबकि उसे उम्मीद बंधी हुई थी बेचने पर उसे थोड़ा पैसा मिलेगा। अगले रोज तेगा ले कर लीची के पेड़ के नीचे बैठने का वही उसका ताब था। उसने मेरे पिता से कहा था मैंने चोरी नहीं की तो मेरे मित्र भी पीछे हटे। इसका अच्छा परिणाम यह निकला वह किसी के बेटे को काटने से बच गया। काटने से उसे सजा होती और लोग अपने बेटों को खोते।

साठ साल पहले की यह कहानी मैं लिख रहा हूँ। मुझे लगता है उस दिन मेरे साथ

भगवान था। मैंने अपने उसी भगवान से अपनी शक्ति मानी है। चाहे मेरे दुरुह रास्ते हों या जीवन की और भी भयानक समस्याएँ, मेरे भगवान के हाथ होते हैं और मैं उन हाथों को थामे रहता हूँ।

प्रश्न 18. अब पूरा हिन्दी जगत जानता है आप अनेक विधाओं में लेखन करते हैं। आप कभी कहानी लिख रहे होते हैं, कभी उपन्यास तो कभी लघुकथा। क्या आप किसी विशेष प्रयोग को ध्यान में रख कर ऐसा करते हैं? इस प्रश्न के अंतर्गत मैं आपसे यह भी जानना चाहूँगा आप अपनी रचनाओं में शैली का निर्धारण कैसे करते हैं?

प्रश्न 18 का उत्तर

किसी भी विधा की रचना हो, उसके केन्द्र में समस्या ही होती है। वह सामाजिक, राजनीतिक, पारिवारिक और इस तरह से अनगिनत समस्याएँ हो सकती हैं। लेखक उसी में डूबता तो कभी बाहर आता भी है। यही उसका लेखकीय मंथन है। मैं कविता न लिखते भी ऐसा मानता हूँ मेरा गद्य ही मेरी कविता की भरपाई कर देता है। वैसे आज की कविता गद्य का ही एक प्रति रूप है। आज की कविता में पूरे वाक्य को तोड़ा जाता है और गद्य में वाक्य को पूरा लिखा जाता है। कविता और गद्य का यह भेद विभेद लिखते मैं अपने ही गद्य की धार पर अपने को खड़ा पा रहा हूँ। मेरी अपनी धार से मेरी अपनी ही चुनौती है क्या मैं एक वाक्य शुरु करने पर उसी समरसता से उसका अंत करता हूँ? निस्सन्देह, इसका उत्तर तो मेरे पास 'हाँ' में ही हो सकता है। तब तो यही मेरे गद्य की सफलता है। मैं आज पीछे मुड़ कर देखता हूँ तो मुझे स्पष्ट दिखायी देता है मैंने सीखते – सीखते ही अपना गद्य बनाया है।

मैंने यहाँ अपने गद्य की वकालत इसलिए की क्योंकि कहानी, उपन्यास और लघुकथा लिखने का मेरा औजार तो गद्य ही है। यह कथावस्तु पर निर्भर करता है मुझे किस तरह की शैली से काम लेना होगा। व्यंग्य हो तो उसमें व्यंग्य की शैली झलके और प्रेम हो तो उसमें प्रेम की शैली सुवासित हो। यही वास्तविक शैली है जो विधाएँ निरूपित करने की कसौटी कहलाती है। ईश्वर की कृपा और मेरी मेहनत के समंवय से मेरे पास भिन्न भिन्न कथ्यों के आधार पर भिन्न भिन्न शैलियाँ हैं। इसे इस तरह से कह सकता हूँ जहाँ सुई की आवश्यकता हो वहाँ मैं सुई से काम लेता हूँ और तलवार चाहिए

तो वह भी मेरे पास होती है।

प्रश्न -19 . आप तो अनेक बार भारत आ चुके हैं। हमें पता है आप नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व सम्मेलन में [सन् 1975] में डा. धर्मवीर भारती के नाटक अंधा युग के मंचन के लिए सह निर्देशक के रूप में आये थे। तब से बहुत साल बीते और उसी अनुपात से आप बहुत बार भारत आये। आपसे जानने की उत्कंठा है इस उम्र में भी भारत आने के लिए आप तत्पर होंगे?

प्रश्न 19 का उत्तर

भारत आना मेरा कोई स्वार्थ नहीं होता। बल्कि भारत न जा पाने की स्थिति में मैंने दो बार सरकारी हवाई टिकट छोड़ा है। इसी साल साहित्य आकादेमी की ओर से मुझे हवाई टिकट के साथ शिमला के लिए आमंत्रण था, लेकिन कारणवश मैंने नम्रतापूर्वक न आने की उन्हें सूचना दे दी।

यह तो मैंने लिखा भारत आना मेरा स्वार्थ नहीं होता, लेकिन हिन्दी साहित्य के नाम पर अब भी सार्थक बुलावा हो तो मेरी ओर से स्वीकृति होगी। मेरा ऐसा मानना है अपने देश की हिन्दी के साथ भारत जाता हूँ और इसके विस्तार के लिए वहाँ जमीन तलाशता हूँ। जमीन मुझे मिलती है और वह जमीन बाहरी न हो कर लोगों के हृदय में होती है।

प्रश्न। -20. आपका विस्तृत साहित्य मुझे प्राप्त हुआ है जो मेरे लिए बहुत ही प्रेरणादायक रहा है। मेरी आत्म शक्ति का स्रोत यही हुआ और मैंने पी. एछ. डी. के लिए आपके उपन्यासों पर शोध करने का संकल्प लिया। मुझे विश्वास है आपको लगेगा मेरा चयन सर्वोचित है। मैं पूरी निष्ठा से कह रहा हूँ आपके सहयोग के बिना मैं अपना कार्य पूरा कर नहीं सकता। अत: आप मुझे अपना आशीर्वाद प्रदान करें।

प्रश्न 20 का उत्तर

बेटे अमित कुमार गुप्ता, तुम्हारे इन शब्दों ने मुझे बहुत ही भावाभिभूत कर दिया। तुमने मुझे लिखा था मेरे उपन्यासों पर अपना शोध केन्द्रित करना चाहते हो। तुमने शोध

का विषय भी मुझे बताया था ---

“प्रवासी हिन्दी साहित्यकार रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में भारतीय संस्कृति एवं परिवेश बोध ”

यह तब की बात है जब मैं तुम्हें जानता नहीं था। तुम्हें जानना तभी से शुरु हुआ और आज हम एक दूसरे के बेहद पहचाने हो गये हैं। तुम्हारी कविताओं, कहानियों और लेखों से मैं निरंतर अवगत होता चला आ रहा हूँ। विद्यार्थी काल में ही इतनी ऊर्जा से भरे हुए हो तुम पर मुझे बहुत आशा है। पर तुम्हारे प्रति मेरी आशा अंतिम नहीं है, बल्कि तुम्हारी लेखकीय निष्ठा को अंतिम होना है। तुम इन दिनों पुस्तकों के प्रणेता के रूप में भी अपनी ख्याति बना रहे हो। तुमने मुझ पर ही एक पुस्तक का बड़ा ही सुन्दर संपादन किया है जिसका तुमने नाम रखा है --- रामदेव धुरंधर कृत : पथरीला सोना में भारतीय मजदूरों और उनकी संतानों का यथार्थ चित्रण। तुमने मुझे यह भी बताया है तुम्हारी सद्य लिखित पुस्तकें इन दिनों प्रकाशनाधीन हैं।

मैं तुम्हारा आत्मीय प्रशंसक हूँ। आशीर्वाद के मेरे हाथ तुम्हारे सिर पर हैं और शुभकामनाओं से मैं तुम्हारे भविष्य पर अपने हस्ताक्षर अंकित कर रहा हूँ।

तुम्हारा अपना ही।

रामदेव धुरंधर मॉरिशस 2–10–2022

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1:- मुंशी प्रेमचंद, गोदान, पृष्ठ संख्या 86.

2:- डॉक्टर लक्ष्मी मल्ल सिंधवी, पृष्ठ संख्या 67.

3:- राजेंद्र वरुण

4:- अटल बिहारी बाजपेई

5:- वीरसेन सिंह जागा, संपादक बसंत त्रैमासिक मासिक

6:- अटल बिहारी बाजपेई

7:- अटल बिहारी बाजपेई, सातवां विश्व हिंदी, सम्मेलन सूरीनाम

8:- डॉ महावीर सरल जैन

9:- डॉ कृष्ण कुमार, वर्तमान साहित्य, पृष्ठ संख्या 69.

10:- डॉ.पद्मेश गुप्त, प्रवासी पुत्र, पृष्ठ संख्या 27.

11:- रामचंद्र वर्मा, संपादक लोकभारती, पृष्ठ संख्या 68.

12:- कृष्ण कुमार ,प्रवास एवं प्रवासी साहित्य, पृष्ठ संख्या 13.

13:- डॉ करनैल सिंह, प्रवासी चेतना प्रवास इतिहास, पृष्ठ संख्या 85.

14:- वेद प्रकाश बटुक, प्रवासी हिंदी लेखन अमेरिका के संदर्भ में, पृष्ठ संख्या 61.

15:- डॉ. चंदन, पंजाबी साहित्य दीवा समस्या, पृष्ठ संख्या 9.

16:- श्यामसुंदर दास, हिंदी शब्द सागर चार खंड, पृष्ठ संख्या 249.

17:- रामचंद्र वर्मा, संपादक लोकभारती प्रमाणिक हिंदी कोश इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या 546.

18:- कृष्ण कुमार, प्रवास एवं प्रवासी साहित्य, पृष्ठ संख्या 13.

19:- संस्कृत कोश

20:- श्यामसुंदर दास, संपादक हिंदी शब्द सागर खंड चार, पृष्ठ संख्या 249.

21:- भारतीय डायस्पोरा .विविध आयाम

22:- कुछ गाँव कुछ शहर -निनापाल- पृष्ठ संख्या 11.

23:- हिंदी का प्रवासी साहित्य -डॉ. कमल किशोर गोयनका .पृ.50.

24:- हिंदी लेखन तथा भारतीय हिंदी लेखन .उषा राजे सक्सेना -पृ.62.

25:- हिंदी का प्रवासी साहित्य .डॉ. कमल किशोर गोयनका .पृ.47.

26:- संस्कृत कोश

27:- भगवानदास कहार, हिंदी प्रवासी कथा साहित्य, पृष्ठ संख्या 55.

28:- कमल किशोर गोयनका, प्रवासी का हिंदी साहित्य, पृष्ठ संख्या 87.

29:- स्वर्णलता खन्ना, संपादकीय हिंदी के प्रवासी साहित्य की परंपरा, पृष्ठ संख्या 60.

30:- गवेषणा पत्रिका अंक 3 केंद्रीय हिंदी संस्थान आगरा पृष्ठ संख्या 47.

31:- कमलेश्वर

32:- डॉ हेमराज सुंदर, दशवें विश्व हिंदी सम्मेलन एक भेंटवार्ता, पृष्ठ संख्या 50.

33:- डॉ. उदय नारायण गंगू, मॉरीशस में हिंदी की स्थिति, पृष्ठ संख्या 156.

34:- श्री जयनारायण, मॉरीशस में हिंदी भाषा का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ संख्या 155.

35:- बलदेव उपाध्याय, लोक संस्कृति की रूपरेखा, पृष्ठ संख्या 33.

36:- कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य, पृष्ठ संख्या 102.

37:- कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य, पृष्ठ संख्या 173.

38:- लक्ष्मी नारायण चतुर्वेदी, 'रसकुंज काव्य' मारीशसीय हिंदी भाषा और साहित्य, पृष्ठ संख्या 574.

39:- डॉ. मीना कौली, विश्व पटल हिंदी, पृष्ठ संख्या 293.

40:- विश्व हिंदी पत्रिका, विश्व हिंदी सचिवालय, पृष्ठ संख्या 192.

41:- डॉ.कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य, पृष्ठ संख्या 414.

42:- डॉ. कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य पृष्ठ संख्या 421-22.

43:- डॉ.कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य पृष्ठ संख्या 421-,22.

44:- डॉ.कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य,पृष्ठ संख्या 421-22.

45:- महाकवि गुलाब खंडेलवाल, कागज की नाव, पृष्ठ संख्या 4.

46:- महाकवि गुलाब खंडेलवाल, जीवन दर्शन, पृष्ठ संख्या 7.

47:- महाकवि गुलाब खंडेलवाल, जीवन दर्शन, पृष्ठ संख्या 43.

48:- वाशिनी शर्मा, विश्व भाषा हिंदी, पृष्ठ संख्या 143.

49:- रमेश दिवाकर, डॉ मीना कौल, विश्व पटल हिंदी, पृष्ठ संख्या 64.

50:- डॉ.कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य, पृष्ठ संख्या 490.

51:- कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्यपृष्ठ संख्या 495.

52:- कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य, पृष्ठ संख्या 505.

53:- पद्मेश गुप्त प्रवासी पुत्र पृष्ठ संख्या 45.

54:- डॉ कमल किशोर गोयनका, हिंदी का प्रवासी साहित्य, पृष्ठ संख्या 506.

55:- स्मारिका, विश्व हिंदी सम्मेलन, पृष्ठ संख्या 190.

56:- प्रो. पुष्पिता अवस्थी, छिन्नमूल, धर्म युग पत्रिका पृष्ठ संख्या 34. अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद

57:- प्रो. पुष्पिता अवस्थी, छिन्नमूल, पृष्ठ संख्या 39. अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद

58:- प्रो. पुष्पिता अवस्थी, छिन्नमूल, पृष्ठ संख्या 37. अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद

59:- प्रो. पुष्पिता अवस्थी, छिन्नमूल, पृष्ठ संख्या 128. अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद

60:- प्रो. पुष्पिता अवस्थी, छिन्नमूल, पृष्ठ संख्या 164. अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद

61. Hindisamay.com Https://www.hindisamay.com

62. Hindisamay.com Https://www.hindisamay.com

63. वही

64. वही

65. वही

66. वही

67. वही

68. वही

69. वही

70. वही

71. वही

72. वही

73. वही

74. वही

75. वही

76. वही

77. वही

88. वही

79. वही

80. वही

81. वही

82. वही

83. वही

84. वही

85. वही

86. वही

87. वही

88. वही

89. वही

90. वही

91. वही

92. वही

93. वही

94. दृष्टव्य -कलम का मजदूर -मदन गोपाल-पृ.329

95. दृष्टव्य .प्रेमचंद और उनका युग -डॉ. रामविलास शर्मा -पृ.31

96. न्यू इंग्लिश डिक्शनरी

97. द नोवेल एण्ड द पीपुल-रॉल्फ फॉक्स -पृ.21

98. साहित्या लोचन -डॉ श्यामसुंदर दास -पृ.135

99. कुछ विचार .प्रेमचंद-पृ.46

100. हिंदी साहित्या कोश .भाग .1 पृ.153

101. The Meaning of Culture .K. M. munshi our greatest Need -पृ.58-60

102. भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता -डॉ. प्रसन्न कुमार आचार्य .पूर्वाभाष-पृ.1

103. भारतीय संस्कृति को गोस्वामी तुलसीदास का योगदान .संस्करण-1953 .अध्याय .1.पृ.1

104. 'Culture '-Ed. 1952 , A-L-kroeber and clyde p.33

105. Culture and History -phillip Bagby-Ed-1951 .पृ-72

106. Dictionary and definition-A. L. kroeber and clyde p.33

107. दृष्टव्य .वही

108. वही

109. Chamters Twentieth Centurys .Dictionary-Ed.1957 -पृ.257

110. भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता -डॉ. प्रसन्न कुमार आचार्य .संस्करण 2014 .पूर्वाभाष -पृ.1

111. दृष्टव्य-जयचंद विद्यालंकार -का.क. ख.1st. Ed.1938 -पृ.1

112. Bous and others-General-anthropology, Ed.1938 पृ.4

113. भारतीय संस्कृति-डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र -पृ.15 संस्करण 1952

114. वही .पृ-17

115. वही .पृ.15

116. I. E. S. Glories of india on indian culture and civilation-dr. p. k. acharya .पृ.5

117. Indian culture -Dr. S.k. chatterjjee -पृ.160

118. बनते बिगड़ते रिश्ते .रामदेवधुरंधर -पृष्ठ संख्या, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली,190

119. वही .पृ-15

120. वही .पृ.22

121. वही

122. वही .पृ.11

123. वही .पृ.12

124. बनते बिगड़ते रिश्ते .रामदेवधुरंधर-पृ.97-98

125. विश्व लघुकथा कोश-पहला खंड .विद्यानिवास मिश्र .पृ.6-7

126. वही

127. वही

128. वही.पृ.5

129. वही .पृ.6

130. वही .पृ.8

131. वही .पृ.7

132. वही .पृ-64

133. वही .पृ.6

134. लोकसंस्कृति का इतिहास .बद्रीनारायण. पृ.38

135. वही

136. मॉरीशस की लोककथाएँ .सं. मुनिश्वरलाल चिंतामणि दो शब्द से .स्टार पब्लिकेशन दिल्ली

137. वही .पृ.2

138. वही .पृ-3

139. वही .पृ.7

140. वही .पृ.8

141. वही

142. वही .पृ.9

143. वही .पृ.11

144. वही

145. Moritius wiki pedia www.google.com

146. मॉरीशस का कथा साहित्य -भारतीय संस्कृति का वाहक .डॉ. संध्या गर्ग ,पृ-484

147. पूछो इस माटी से -रामदेवधुरंधर -पृ-417, नेशनल पब्लिशिंग, हाउस दिल्ली

148. वही . पृ-312

149. वही .पृ.203

150. वही . पृ.313

151. वही . 316

152. वही .पृ.212

153. वही . 288

154. वही .

115. वही.पृ.329

156. वही .पृ-121

157. पूरो वाक -रामदेवधुरंधर -पृ.9

158. पथरीला सोना -दूसरा खण्ड .पृष्ठ संख्या, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2014

159. फेसबुक साक्षात्कार एवं पथरीला सोना (पाँचवां खण्ड एक भावभीनी शुभकामना) रामदेव धुरंधर

160. पथरीला सोना .प्रथम खण्ड -रामदेवधुरंधर -पृ.362 -363

161. वही

162. 'चेहरे मेरे तुम्हारे ' -रामदेवधुरंधर .भूमिका से .1998

163. पृथ्वीपुत्र -डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल .पृ.75

164. पथरीला सोना ,खण्ड 3 .रामदेवधुरंधर .पृ-21

165. वही .पृ-220

166. वही .भाग 2 .पृ-21

167. वही .भाग 3 -पृ.46

168. वही भाग 4 .पृ.49

169. वही .खण्ड 5 .पृ.149

170. वही .पृ. 269

171. वही .खण्ड 4 .पृ.270-271

172. वही

173. वही .पृ.333

174. वही . पृ .373

175. मॉरीशस का हिंदी साहित्य .एक समृद्ध परंपरा .डॉ. सतीष अग्रवाल .पृ.115

176. ढलते सूरज की रोशनी .रामदेवधुरंधर .पृ.संख्या11,समसामयिक प्रकाशन, दिल्ली

177. वही .पृ.135

178. पथरीला सोना -प्रथम खंड .रामदेवधुरंधर .पृ-16, वाणी प्रकाशन, 2014

179. वही .पृ.17

180. वही -पृ.18

181. रामदेवधुरंधर की रचनाधर्मिता .डॉ. अम्बरीश-पृ.65

182. पथरीला सोना .रामदेवधुरंधर -खंड 2 -पृ.73-74

183. पथरीला सोना .खंड 1 .रामदेवधुरंधर -पृ.22

184. वही -पृ.30

185. वही

186. वही

187. ढलते सूरज की रोशनी .रामदेवधुरंधर -पृ.29

188. वही .पृ.76

189. पथरीला सोना -रामदेव धुरंधर .खंड 1.पृ-15

190. वही .पृ.19-20

191. वही

192. वही-पृ.20

193. वही .पृ-32

194. वही.पृ-288

195. वही .पृ-65

196. वही.पृ-284

197. वही .पृ-289 -290

198. बनते बिगड़ते रिश्ते -पृ.10

199. पथरीला सोना .खंड 1. रामदेवधुरंधर .पुरोवाक से

200. वही-पृ.313

201. ढलते सूरज की रोशनी .रामदेवधुरंधर -पृ -9

202. पथरीला सोना -चतुर्थ खंड -रामदेवधुरंधर .पृ-441

203. विषमंथन-रामदेव धुरंधर -पृ.21

204. जन्म की एक भूल -रामदेव धुरंधर-पृ.199

205. पथरीला सोना .भाग 1-रामदेव धुरंधर -पृ.102-103

206. 'पूछो इस माटी से ' .रामदेव धुरंधर .पृ-427, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली

207. बंदे आगे भी देख .रामदेव धुरंधर -पृ.120

208. चेहरे मेरे तुम्हारे .रामदेव धुरंधर-पृ.136

209. बनते-बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर-पृ 189, प्रभात प्रकाशन दिल्ली

210. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर-पृ.466, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली

211. विराट गली के बासिन्दे-रामदेव धुरंधर .पृ.97, आधार शिला प्रकाशन, उत्तराखंड

212. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर .पृ.83, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली

213. बनते-बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर -पृ ,151, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली

214. पथरीला सोना .भाग 4.रामदेव धुरंधर .पृ.235

215. बनते-बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर-पृ.17

216. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर .पृ.146

217. पथरीला सोना - भाग 4 रामदेव धुरंधर .पृ.218-219

218. बनते-बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर-पृ.12

219. पथरीला सोना भाग .1.रामदेव धुरंधर .पृ.13

220. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर .पृ.25

221. विराट गली के बासिंदे-रामदेव धुरंधर .पृ.119, आधार शिला प्रकाशन

222.मॉरीशस का हिन्दी साहित्य .एक समृद्ध परंपरा .डॉ. सतीश चंद्र अग्रवाल .पृ.127

223. पथरीला सोना .भाग 1 .रामदेव धुरंधर .पृ. 50,

224. वही .पृ.55

225. हिन्दी का सामाजिक संदर्भ.डॉ सतीश अग्रवाल. पृ.1

226. वही

227. हिन्दी का सामाजिक संदर्भ- डॉ. सतीश अग्रवाल -पृ.37

228. पथरीला सोना भाग-3 .रामदेव धुरंधर -पृ.21

229. वही .पृ.127

230. वही .पृ-214

231. पथरीला सोना भाग 1 .रामदेव धुरंधर .पृ.76

332. वही .पृ.237

पत्र-पत्रिकाएँ :-

1. वतन से दूर अभिव्यक्ति ,2008

2. स्मारिका .सं .कमल किशोर गोयनका

3. विश्वा -त्रैमासिक .अमरिका

4.गगनांचल .विश्व हिंदी अंक

5. वसन्त-त्रैमासिक .मॉरीशस

6. वर्तमान साहित्य .प्रवासी साहित्य विषेषांक

7. चाँद .प्रवासी विषेषांक .कलकत्ता

8. विशाल भारत .प्रवासी अंक

9. पुष्पगन्धा त्रैमासिक पत्रिका .विषेषांक .डॉ. कमल किशोर गोयनका

10. कल्पान्त पत्रिका . डॉ. कमल किशोर गोयनका

वेब पत्रिका:-

1. अभिव्यक्ति

2. प्रवासी दुनिया

3. वीकीपीडिया

4. साहित्य-शिल्पी

5. आलोचना

6.कथादेश

7. वर्तमान साहित्य